द्वितीय अध्याय

द्वितीय अध्याय

समाज एवं उसके विविध रूप

- समाज की अवधारणा
- भारतीय समाज पर राजनीति का प्रभाव
- भारतीय समाज पर धर्म का प्रभाव

- भारतीय समाज पर संस्कृति का प्रभाव
- भारतीय सामाजिक परिवेश एवं स्वातंत्र्योत्तर समाज का बदलता स्वरूप

समाज की अवधारणा,स्वरूप,विविध रूप :-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज से अलग रहकर मनुष्य जीवन-यापन नहीं कर सकता मनुष्य समाज में जन्म लेता है, इसी समाज में विकसित होता है और इसी समाज में उसका अन्त हो जाता ह । किसी भी मनुष्य का अकेला रहना असंभव है इसलिये मनुष्य अपना अकेलापन दूर करने के लिए पारस्परिक संबंध स्थापित कर एक दूसरे के सम्पर्क में आता है और इन संबंधों से जो समूह बनता है उसे समाज कहते ह । समाज में रहकर मनुष्य स्वयं को सुरक्षित अनुभव करता है । समाज में रहकर ही मनुष्य सभ्यता-संस्कृति आचार-विचार,रीति-रिवाज आदि ग्रहण करता है तथा बौद्धिक रूप से विकसित होता है । समाज के संपर्क के बिना व्यक्ति का विकास असंभव है तथा किसी पशु से कम नहीं । उदाहरण के लिएः- "मुगल बादशाह अकबर, मिस्र के बादशाह सेमेटिकस तथा स्काटलैण्ड के राजा जेम्स चतुर्थ ने ऐसे कुछ प्रयोग किये थे । उसी प्रकार आधुनिक समाज शास्त्र में भी कुछ दृष्टांत हैं जैसे :- कास्पर हाउस नामक बालक समाज से अलग होकर 1828 में जब पुनः मानव समाज में आया तो वह मनुष्य को तरह सीधा खडा नहीं हो सकता था । 1920 में दो बच्चियां भेडियों की गुफा में मिली जो ठीक भेडिये की तरह गुर्राती थीं । अमरीकी बच्ची अना का भी हाल हम जानते हैं जो 1938 में पायी गयी थी वह भी न बोल सकती थी, न चल सकती थी । 1954 में भी लखनऊ में भेडिये द्वारा पाले गये एक बच्चे रामू ने भी तहलका मचा दिया । अकबर द्वारा प्रयोग के तौर पर समाज से अलग किये गये 10 बच्चे कोई भाषा नहीं बोल सकते थे ।"0।

इससे स्पष्ट होता ह कि समाज से अलग रहकर मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं वह केवल पशु के समान है । समाज में रहकर ही मनुष्य मनुष्य बनता है अर्थात उसम मनुष्यता आती है ।

समाज मे रहने के कारण ही मनुष्य पारिवारिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक संबंधों से प्रभावित होकर जागरूक होता है तथा श्रेष्ठ जीवन यापन करने के लिये श्रेष्ठ मार्ग की ओर प्रशस्त होता है ।

उसी प्रकार से डा० बी० एस० पिल्लै जी अपने उपन्यास "विष्णु प्रभाकर के नाटय साहित्य सामाजिक चेतना" में लिखते हैं -"मानव समाज की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों मतभेद है कुछ विद्वानो का मत है कि मनुष्य एक दूसरे से अलग होकर रहने वाले प्राणी थे वे अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिये दूसरों से झगडा करना पसन्द करते थे । समाज के गठन के पहले मनुष्य का जीवन जानवरों के जीवन के समान था वे आपस में लडते-झगडते थे । उनकी दशा अत्यन्त दयनीय थी इसलिये सब लोगों न मिलकर एक समझौता किया जिसके फलस्वरूप समाज का गठन हुआ समाज के बिना मनुष्य अपना जीवन बिता सकते हैं, लेकिन मनुष्य क बिना समाज कदापि सम्भव नहीं है । व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध परम्पराश्रित है । एक का प्रभाव दूसरे पर पड बिना नहीं रहता ।"02

समाज से हटकर मनुष्य की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि मनुष्य का जीवन पूर्ण रूप से समाज पर निर्भर है तथा समाज से अलग रहकर मनुष्य का जीवन नीरस है । समाज तथा मनुष्य दोनो दूसरे के पूरक हैं कह सकत हैं कि समाज और मनुष्य दोनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है । मैकाइवर के मतानुसार -"व्यक्ति और समाज के बीच सम्बन्ध एकपक्षीय नहीं होता इनमें किसी भी एक को समझने के लिये दूसरे को भी समझना आवश्यक होता है व्यक्ति और समाज का व्यवहार परस्पर के प्रति विरोध मूलक नहीं हो सकता ।"03

समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की अपनी अलग-अलग आवश्यकताएं होती है यथा : सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक ,बौद्धिक, मानसिक अथवा आध्यात्मिक । इन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति वह केवल समाज के सहयोग से ही कर सकता है । समाज के बिना इन आवश्यकताओं को पूरा करना असम्भव है । व्यक्ति इन ज़रूरतों के माध्यम से सम्पर्क में आता है और इस सम्पर्क तथा पारस्परिक सम्बन्धों से समाज विकसित होता है ।

यदि यह पारस्परिक सम्बन्ध न हो तो समाज की कल्पना नहीं की जा सकती । डॉ० बी० एस० पिल्लै जी के अनुसार- "समाज सामाजिक सम्बन्धों का पार्श्व है मनुष्य की पारस्परिक क्रियाएं - अन्तःक्रियाएं एवं प्रति-क्रियाएं ही समाज का निर्माण एवं विकास करती हैं ।"04

समाज एक ऐसी संस्था है जिसमें रहकर मनुष्य अपने विचारों का आदान-प्रदान करता है जिससे वह व्यावहारिक बनता है और इस व्यवहार के कारण जिस समुदाय का विकास होता है उस विकसित समुदाय को हम समाज की संज्ञा देते हैं । एक सामाजिक प्राणी अपनी अनेक आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के साथ इस दुनिया में आता है किन्तु इन अपेक्षाओं को वह अकेला पूर्ण नहीं कर सकता इसकी पूर्ति वह समाज द्वारा ही कर पाता है अतः हम कह सकते हैं कि मनुष्य मानसिक तथा शारीरिक रूप से समाज पर निर्भर है ।

समाज की परिधि विस्तृत एवं विशाल है । समाज की स्थापना के बारे में डॉ० शशि भूषण सिहंल लिखते हैं - "मानव के विकास क्रम में समाज की स्थापना हुई है । मनुष्य सामाजिक प्राणी है, व्यक्ति ने अपने रति सम्बन्धी एवं पैतृक मूलवृत्तियों के कारण अपना अकेलापन त्यागकर जीवन अपनाया है । उसके उपरान्त उसकी सामाजिक भावना उत्तरोत्तर विकसित होती रही है अतः समाज सोद्देश्य व्यक्तियों का गतिशील गठन है । समाज अपने सदस्यों को बाह्य घातक तत्वों द्वारा नष्ट होने से बचाता है, रक्षा कर उनके व्यक्तित्व का विकास करता है और कुछ जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा कर उन्हें पाने के लिये प्रयत्नशील रहता है ।"05

डार्विन के अनुसार - "जैसे-जैसे वर्ग संघर्ष बढने लगा वैसे - वैसे मानव का अपना छोटा-सा परिवार बढने लगा । कई रक्त सम्बन्धित परिवारों ने एक संघ का निर्माण किया जिसके नियमों सम्बन्धों की व्यवस्था आदि से बंधे रहकर वे सभी एक-दूसरे की भलाई में रत रहने लगे । इस प्रकार समाज का निर्माण हुआ ।"06

हिन्दी शब्द सागर में समाज का अर्थ यूं दिया है -"एक ही स्थान पर रहने वाले अथवा एक ही प्रकार का व्यवसाय आदि करने वाले, वे लोग जो मिलकर

अपना एक अलग समूह बनाते हैं जैसे - शिक्षित समाज, ब्राह्मण समाज अथवा वह संस्था जो बहुत लोगों ने मिलकर, एक साथ मिलकर किसी विशिष्ट पूर्ति के लिये स्थापित की हो ।"07

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'समाज' बहुत व्यापक शब्द है । जिसकी कुछ शब्दों में परिभाषा नहीं की जा सकती । इसलिये अनेक लेखकों और उपन्यासकारों ने समाज की जितनी परिभाषाएं की हैं सभी मान्य हैं किन्तु समाज की अब तक कोई अन्तिम परिभाषा नहीं है और न ही होगी क्योंकि जब तक समाज है तब तक समाज की परिभाषाओं का अन्त नहीं होगा ।

अतः समाज का विस्तारपूर्वक अध्ययन कर लेना आवश्यक है -

परिवार :-

परिवार समाज की प्रथम इकाई है जिसके फलस्वरूप समाज का निर्माण हुआ है । "समाज परिवार से राष्ट्रीय स्तर तक कई इकाईयों में विभक्त है ।"08 उसी प्रकार "परिवार समाज की केन्द्रीय इकाई है और सामाजिक समूहों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण ह । इसीलिए परिवार एक सार्वभौमिक, सामाजिक घटना है ।"09

प्रत्येक व्यक्ति एक परिवार में जन्म लेता है और वह जन्म से लेकर मृत्यु तक अपने परिवार का अंग बना रहता है । सर्वप्रथम परिवार में रहकर व्यक्ति सभ्यता-संस्कृति, आचार-विचार ग्रहण करता है । परिवार ही उसे अनुशासित बनाता है । परिवार माता-पिता एवं अविवाहित भाई-बहन का वह समूह है जिसका प्रत्येक सदस्य एक दूसरे पर निर्भर तथा एक दूसरे का पूरक होता है । "व्यक्ति-व्यक्ति से परिवार बनता है ठीक उसी प्रकार अनेक परिवार एक जगह आ जाने से समाज की निर्मिति होती है । अतः समाज को किसी भी हालत में परिवार से अलग नहीं रखा जा सकता ।"10

परिवार के सभी सदस्य एक साथ मिलकर रहते हैं तथा दःख-सुख के भागी होते हैं । व्यक्ति परिवार में रहकर ही अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है

"परिवार व्यक्ति की धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं आथिक सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है ।"।।

परिवार में रहकर ही शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर मनुष्य आने वाली पीढा की नींव रखता है और इस प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी यह क्रम चलता रहता है । यौन सम्बन्ध स्थापित करने का परिवार एक मूलभूत आधार है जिसके परिणाम स्वरूप सन्तान की उत्पत्ति होती है । परिवार में जन्म लेने वाला नया सदस्य ही समाज का निर्माण करता है और इस प्रकार मनुष्य मर कर भी स्वयं को अपनी आने वाली पीढा में जीवित रख पाता है ।

परिवार ही एक गर्भवती महिला की देखभाल, उसके खान-पान का ध्यान अच्छे से रख सकता है । शिशु के आने पर उसकी सुरक्षा और देखभाल भी पूरा परिवार मिलकर करता है । बच्चे का पालन-पोषण तथा अन्य आवश्यकताओं को परिवार ही पूरा करता है । धीरे-धीरे बच्चा बडा होता है उसकी प्रथम पाठशाला उसका परिवार ही होता है, जहा वह अनुशासन में रहकर बात करना, नीति-नियम, सभ्यता- संस्कृति आदि सीखता है । परिवार में ही उसका समाजीकरण होता है जिसके फलस्वरूप मनुष्य समाज में रहने योग्य बनता है ।

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में उसके परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । परिवार ही सर्वप्रथम मनुष्य को समाज में रहने योग्य बना उसे अपने दायित्वों के प्रति दृढ बनाता है । परिवार ही है जो एक दूसरे के प्रति स्नेह भाव तथा सहयोग की भावना रखने की प्रेरणा देता है । रिश्तों के प्रति आदर सम्मान करना सिखाता है इसके अतिरिक्त गलत रास्तों से सतर्क रहना भी परिवार ही सिखाता है । परिवार ही एक व्यक्ति को अनुशासित, शिक्षित, प्रतिष्ठित तथा सुसंस्कृत बनाता है ।

परिवार को यदि वर्गीकरण की दृष्टि से देखा जाये तो परिवार के अनेक वर्गीकृत रूप हैं किन्तु हम यहाँ संयुक्त परिवार एवं विस्तृत परिवार पर दृष्टि डालगे ।

संयुक्त परिवार :- संयुक्त परिवार चाचा-चाची, ताऊ-ताई यानि पिता के बड़े भाई एवं भाभी उनके बच्चे तथा दादा-दादी का समूह होता है । ये सभी लोग एक साथ मिलकर एक ही घर

में रहते हैं । रसोई में खाना एक साथ ही बनता है । तीज-त्यौहार एवं शादी-ब्याह आदि प्रसंग सब साथ मिलकर मनाते हैं । आर्थिक रूप से परिवार के मुख्य अर्थात कमाऊ सदस्य भागीदार होते हैं । पूरा संयुक्त परिवार अपने अधिकारों का पालन करना अपना कर्तव्य समझता है ।

संयुक्त परिवार के विषय में डा० शशि जेकब लिखते हैं - "प्राचीन युगीन परिवार का स्वरूप अत्यन्त सहज और सरल था । उस समय परिवार प्रायः पितृ-प्रधान अथवा मातृ-प्रधान होते थे । पितृ-प्रधान परिवार में घर का मुखिया पति होता था और मातृ-प्रधान परिवार में घर की मुखिया माता होती थी । परिवार के सभी सदस्य मिल जुलकर रहते थे और पैतृक कार्यों में हाथ बँटाते थे ।"12

विस्तृत परिवार :-

विस्तृत परिवार अनेक सम्बन्धियों अर्थात रक्त सम्बन्धी तथा अन्य सम्बन्धियों का समूह होता है । परिवार विस्तृत होने के कारण परस्पर सम्बन्ध समझने में नहीं आता । ऐसे परिवार में एक मुखिया होता है जिसका पूरा परिवार आदर करता है तथा परिवार के अनेक फैसले उसी पर निर्भर होते हैं । ऐसे परिवार में दामाद घर जमाई बनकर रहता है इसके अतिरिक्त उसके माता-पिता भी अपने बेटे के साथ परिवार में रहते हैं अर्थात समधी-समधन भी साथ में रहते हैं । लडकी की बुआ भी मायके में ही अपने पति के साथ रहती है । इस प्रकार जहाँ अनेक परिवार एक साथ रहते है वह परिवार विस्तृत परिवार की श्रेणी में आता है ।

निष्कर्ष :-

इस प्रकार परिवार ही समाज की उत्पत्ति का एक मात्र साधन है । व्यक्ति-व्यक्ति से मिलकर परिवार तथा परिवार से समाज का निर्माण हुआ है । यह कहना गलत न होगा कि समाज स्वयं एक परिवार है जिसमें निवास करने वाला प्रत्येक नागरिक समाज का सदस्य है ।

आज के युग का आधार पूर्ण रूप से आर्थिक बन गया है और इसी आर्थिक स्थिति पर सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्थिति निर्भर है । हम कह

सकते हैं कि आज के इस युग में इन सारी परिस्थितियों का मूल आधार 'अर्थ ' है । इसी स्थिति पर दृष्टि डालते हुए बापू राव देसाई लिखते हैं - "हमारे आस-पास के समाज पर अगर हम निगाह डालेंगे तो यह तथ्य शत-प्रतिशत सच्चा दिखाई देता है । आज का समाज न पुरुष प्रधान है ,न स्त्री प्रधान है वह तो अर्थ प्रधान है ।"13

आज के इस युग में स्त्री-पुरुष चाहे वह किसी भी समाज का हो अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने की जी तोड़ कोशिश कर रहा है और इसी जी तोड कोशिश में जो सफल होकर आर्थिक आधार पर पूर्ण रूप से सम्पन्न है वह उच्च वर्गीय समाज के अन्तर्गत आया तथा जो आत्म निर्भर होकर उच्च साक्षरता प्राप्त करने के भरपूर प्रयत्न करते हैं और अपने समाज के नीति-नियमों का पालन करना, आत्म सम्मान को अपने प्राण से भी अधिक मान देना ऐसे लोग मध्यम वर्गीय समाज में आये । उसी प्रकार जो लोग पूर्ण रूप से श्रम पर आश्रित होते हैं, जो अपनी आजीविका के लिये निरंतर शारीरिक श्रम करते रहते हैं यह वर्ग निम्न वर्गीय समाज कहलाता है । निम्न वर्गीय समाज के सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध अमेरिकन शास्त्री सैन्टर्स लिखते हैं - "निम्न वर्ग उन लोगों का वर्ग होता है जो अपनी आजीविका के लिये कायिक श्रम पर निर्भर रहते हैं । जीविकोपार्जन के लिये अपने कायिक श्रम पर ही रहने वालों के इस गरीब वर्ग के लिये दलित वर्ग, पीडित वर्ग, सर्वहारा वर्ग आदि नाम भी हैं ।"14

इस प्रकार आर्थिक परिस्थितियों के आधार पर इन समाजों को उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग तथा निम्न वर्ग आदि तीन वर्गों में विभाजित किया गया है और इन प्रत्येक वर्गों में अपने कुछ नीति-नियम अथवा विशेषताएं देखने को मिलती हैं इस वर्ग भेद के विषय म डॉ० गिरधारी जी कहते हैं - "वर्ग भेद की यह भावना आदिम काल से चली आ रही है । बहु संख्यक समाज में सभी लोग एक ही श्रेणी के नहीं हो सकते इसलिये ऊंच-नीच, वर्ग-भेद, पूँजीपति व सर्वहारा वर्ग का अन्तर तो समाज में निरंतर चला आ रहा है ।"15

निष्कर्ष

इस प्रकार वर्गों की उत्पत्ति कब और कैसे हुई यह निश्चित करना कठिन है । आर्थिक विकास की गति प्रत्येक वर्ग को प्रभावित करती है और समाज में आर्थिक स्थिति की भिन्नता होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति को एक दूसरे पर निर्भर रहना पडता है और निर्भरता समाज को वर्गों में विभाजित करती है । अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आज का समाज अर्थ प्रधान समाज है तथा प्रत्येक समाज की अपनी अलग-अलग विशेषताएं, मान्यताएं हैं । अतः इन समाजों का हमें विस्तार पूर्वक अध्ययन कर लेना चाहिये ।

उच्च वर्गीय समाज :-

जैसा कि हम पहले भी अध्ययन कर चुके हैं कि उच्च वर्गीय समाज आर्थिक रूप से सम्पन्न होता है और यह समाज स्वयं को सभी समाजों से ऊपर समझता है । आर्थिक स्थिति से सम्पन्न होने के कारण यह समाज निम्न वर्गीय समाज का शोषण करता है । तथा अपने लाभ के लिये किसी भी हद तक जाता है । उसका एक ही लक्ष्य होता है कि किसी भी तरह से धन संग्रह करना है । डॉ० मोहिनी की दृष्टि में - "भारत का उच्च वर्ग अर्थ समृद्ध होते हुए भी आर्थिक मूल्यों से शून्य है । इस वर्ग का लक्ष्य गरीबों का अधिक से अधिक से शोषण करके अर्थ इकटठा करना है, क्योंकि इसे यूरोपीय, अमरीकी पूंजीपतियों से प्रतिस्पर्धा करनी है । भले ही उसमें समस्त मानवीय मूल्यों की हत्या ही करनी पड ।"16

इस समाज के अन्तर्गत बड-बड सेठ- साहूकार, व्यापारी, उद्योगपति, मिल मालिक, जमींदार अथवा राजा-महाराजा इत्यादि आते हैं । ऐसे लोग प्रायः गरीबों पर अत्याचार करने के आदि होते हैं तथा निम्न वर्ग पर जुल्म करना अपना अधिकार समझते हैं । उच्च वर्गीय समाज के लोग धन-लोलुप होते हैं तथा वे सदैव धन के पीछे भागते रहते हैं । ये समाज अनेक उपायों द्वारा धन एकत्र करने के प्रयत्न करता रहता है । ऐसे लोग किसी भी प्रकार के सम्बन्ध को अधिक समय तक नहीं दे पाते तथा अपने परिवार अथवा सगे-सम्बन्धियों के साथ भी दुर्व्यवहार करते हैं उनके लिये सब कुछ, सारे रिश्ते - नाते केवल धन होता है ।

उच्च वर्गीय समाज अपने व्यवसाय में इतना व्यस्त होता है कि उनके पास अपने परिवार के साथ व्यतीत करने का समय नहीं होता यहां तक कि वे अपनी संतान को अच्छी परवरिश भी नहीं दे पाते । कितने ही परिवारों की संतानें माता-पिता के प्रेम से वंचित रह जाती हैं । समय न देने क कारण ऐसी संतानें गलत आदतों की शिकार बन जाती हैं । धन लोलुप ये समाज पैसा कमाने में इतना व्यस्त होता है कि पति - पत्नी एक दूसरे को समय नहीं दे पाते, इसी कारण न जाने कितने परिवार, कितने घर टूट जाते हैं क्योंकि इन लोगों में किसी की भावनाओं के लिये कोई स्थान नहीं होता यह लोग अपने ही समाज तक सीमित रहते हैं । झूठी वाह वाही तथा झूठे आदर्शों का दम भरते हैं । ऐसे लोग आर्थिक रूप से हानि होने पर भी अपनी शान नहीं खोते तथा झूठी प्रतिष्ठा पर गर्व करते हैं ।

यह समाज अर्थ के बल पर कितने गलत काम करता और करवाता है अर्थ के बल पर नारी शोषण आम बात है इस प्रकार ऐसे लोग अपनी कामुक वृत्ति का परिचय देते हैं । ऐसे कितने ही लोग हैं जिनमे कुछ खुलकर तथा कुछ अपनी झूठी शान अथवा इज़्ज़त के पीछे काले-कारनामें करते हैं । हालात से सतायी हुई कितनी ही नारी को अपनी हवस का शिकार बना लेते हैं और पैसे के बल पर उनका मुँह हमेशा-हमेशा के लिए बन्द कर देते हैं । आर्थिक बल पर मनमानी करना ये लोग अपना अधिकार समझते हैं ।

इस वर्ग के सम्बन्ध में डा० कोलाकर का कहना है कि - "गरीब जनता को फँसाकर उनसे मुफ्त में श्रम लेने की प्रवृत्ति, दूसरे के श्रम पर ऐश करने की इच्छा, अपने सुख पर कमी आने पर निर्बलों पर क्रोध उतारने की प्रक्रिया, अधिकार प्रदर्शन करने हेतु असमय किये जाने वाले अत्याचार, वासना तृप्ति के लिये अबलाओं पर किये जाने वाले बलात्कार आदि का समुच्चय इस वर्ग में स्पष्टतः प्राप्त होता है ।"।7

उच्च वर्गीय समाज आर्थिक रूप से सम्पन्न अवश्य होता है किन्तु यही आर्थिक सम्पन्नता उससे रातों की नींद और दिन का चैन छीन लेती है । लालच ग्रस्त इस समाज में सभ्यता-संस्कृति का कोई मोल नहीं होता । ये लोग सभ्यता-संस्कृति से भरे केवल भाषण ही दे सकते हैं या झूठा दिखावा कर सकते हैं क्योंकि इनके लिए तो आर्थिक सम्पन्नता ही सबकुछ है । किन्तु परायी स्त्री पर बुरी नजर डालना एवं अनेक विवाह करना वह भी अपनी

बेटी की उम्र की लडकी से अपनी शान समझते हैं डॉ० मंजूर सैयद जी लिखते हैं - "उच्च वर्ग की आर्थिक सम्पन्नता ही उनकी सर्वोच्चता एवं जाति होती है । इसीलिये वह वैयक्तिक जीवन में किसी भी प्रकार का, उम्र का ख्याल या नैतिकता का हामी नहीं होता । परिणामतः वह समाज के सम्मुख केवल बाहरी दिखावे के लिये आदर्श भरे वक्तव्य देता है एवं आदर्श के तौर पर अनेक स्त्रियों से विवाह करता है ।"।8

यह समाज अपने परिवार के साथ तीज-त्यौहार मनाने का भी समय नहीं निकाल पाता और इसी कारण परिवार में मन-मुटाव उत्पन्न हो जाता है और न जाने कितने दाम्पत्य जीवन दाव पर लग जाते हैं । ऐसे ही घरों की नारी पति से समय न मिलने पर पर-पुरुष की ओर आकृष्ट हो जाती है, जिनको धन से कोई लगाव नहीं होता वह अपने पति से केवल प्रेम की इच्छा रखती हैं और इसी प्रकार ऐसी कितनी ही नारियां जो अपने व्यवसाय में इतनी व्यस्त होती हैं कि उनके पास अपने पति और संतान के लिये समय नहीं होता ।

डॉ० पी० एम० थॉमस उच्च वर्गीय समाज के विषय में लिखते हैं - "उच्च वर्ग के लोग प्रायः किसी व्यवसाय में लग जाकर कायिक श्रम नहीं करते हैं । वे अपनी एक अलग उपसभ्यता का पालन करते हैं और अपनी औलादों को भी वैसी ही शिक्षा या प्रशिक्षण देते हैं आर्थिक स्थिति में कमी हो जाने पर भी अभिजात वर्ग प्रायः अपनी शान और गरिमा पर गर्व करते रहेंगे । अपनी वर्ग वरण्यता पर सजग होने से उच्च वर्ग सदैव निम्न वर्गों से दूर रहता है । गरीब निम्न वर्गों के बारे में उसको विश्वास है कि वे सब बौद्धिक क्षमता में निचले हैं और आलस एवं दुर्भाग्य ग्रस्त हैं ।"।9

निष्कर्ष :- उच्च वर्गीय समाज में जहाँ एक ओर धनलोलुप लोग हैं वहीं कुछ लोग ऐसे भी हैं जो धन का उचित ढंग से उपयोग करते हैं । जैसा कि कुछ लोग अपनी ओर से गरीबों में उनकी आवश्यकतानुसार सहायता करते हैं, कुछ चैरिटी, दान इत्यादि करते हैं, तो कुछ कन्याओं की शिक्षा में होने वाले खर्च की जिम्मेदारी लेते हैं किन्तु इस समाज का एक चौथाई भाग ही इस तरह के कामों में रुचि लेता है इसके अतिरिक्त लोग अपने धन का गलत उपयोग ही करते हैं

। इतना ही कह सकते हैं कि आधुनिक युग में धन के प्रति लोगों की लालसा बढ़ रही है जिसके कारण व्यक्ति धन के लिये किसी भी हद तक जाता है ।

मध्यम वर्गीय समाज :-

" मध्यमवर्ग "- "मिडिल क्लास" शब्द का प्रथम प्रयोग इंग्लड में 1812 में हुआ था । 1831 में "स्पैक्टेटर" पत्रिका में 'बौमान' नामक लेखक ने इस वर्ग को "देश का धन और मस्तिष्क" रूप में चित्रित किया । " हिन्दी में मध्य वर्ग " तथा "मध्यम वर्ग" दोनों शब्द "मिडिल क्लास" के लिये प्रचलित हैं ।"20

इसी प्रकार मध्यम वर्ग के उदभव के बारे में डॉ० चव्हाण लिखते हैं - "भारत में मध्य वर्ग का उदय किसी तिथि को हुआ इसका निश्चित उत्तर देना संभव नहीं है क्योंकि समाज में जो कुछ नव-निर्माण होता रहता है या जो कुछ नष्ट होता जाता है इसकी योजना नहीं हुआ करती । भारत म जो कुछ नष्ट या नव-निर्माण हुआ, वह धीरे-धीरे काल के साथ ही हुआ है कोई निश्चित तिथि निर्धारण कर, नारियल फोड और मुहूर्त देखकर तो देश में मध्य वर्ग का उदय नहीं हुआ है । हमारे देश के इस वर्ग के विकास में अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों तथा घटनाओं का बहुत बडा सहयोग रहा है ।"21

मध्यवर्ग की विशेषताओं के सन्दर्भ में अरस्तू ने कहा है - "सभी राज्यों में तीन प्रकार के व्यक्ति मिलते हैं - एक वर्ग बहुत धनी है, दूसरा बहुत ही निर्धन है और तीसरे प्रकार के व्यक्ति मध्यम श्रेणी के हैं । इस मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों में कई बातें बहुत अच्छी हैं अतः मेरी इच्छा है कि मैं अपने नगर के मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों में ही जाना जाऊँ ।"22 उसी प्रकार आर० एच० ग्रेटन के अनुसार- "मध्य वर्ग का नाम ही समाज के स्तर की ओर संकेत करता है । यह वर्ग आज भी मौजूद है और उसकी अपनी विशिष्टताएँ हैं । यह वर्ग अपनी विशिष्टताओं अथवा अपने गुणों से इतना मिला-जुला है कि इस वर्ग को अन्य वर्गों के मध्य ही माना जाता है ।"23

मध्यम वर्गीय समाज कठिन परिश्रम और संघर्ष का परिचायक है । यह समाज सदैव अपनी आवश्यकताओं के प्रति सचेत रहता है । इस समाज की आर्थिक स्थिति न बहुत अच्छी होती है न खराब । मध्यम वर्गीय समाज रोटी, कपडा और मकान इन तीन वस्तुओं के लिये चितिंत रहता है । इस समाज के अन्तर्गत शिक्षक, क्लर्क, नौकरी करने वाले साधारण लोग आते हैं । इसके अतिरिक्त डॉक्टर, वकील, दुकानदार, सरकारी कर्मचारी आदि भी मध्यमवर्गीय समाज में आते हैं ।

डॉ० बी० बी० मिश्र ने भारतीय मध्यवर्ग के विकास की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए लिखा है - "सन 1905 से पूर्व का समय दो भागों में बाँटा जा सकता है प्रथम भाग में कम्पनी शासन के अन्तर्गत मध्यवर्ग का उदय हुआ और दूसरे भाग में सम्पन्न और निम्न मध्यवर्ग के परिवारों में अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार हुआ ।"24 ए० आर० देसाई भी मध्यवर्ग के विकास में अंगजी शिक्षा को उत्तरदायी मानते हैं, "अंग्रजों ने भारत में नवीन शिक्षा-पद्धति का सूत्रपात किया, जिनके फलस्वरूप शिक्षित मध्यवर्ग का निर्माण हुआ । उस वर्ग में वकील, डॉक्टर, टेक्नीशियन, प्रोफेसर, पत्रकार, राज्य कर्मचारी, क्लर्क, विद्यार्थी और अन्य व्यक्ति सम्मिलित थे ।"25

मध्यम वर्गीय समाज का मन आकांक्षाओं से भरा होता है । तथा सपने देखने का आदि होता है । इस समाज का व्यक्ति सदैव प्रयत्नशील रहता है । सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिये निरंतर प्रयास करता रहता है । भविष्य के प्रति सचेत रहने वाला मध्यम वर्ग का व्यक्ति व्यय के प्रति चिंतित रहता है । मध्यम वर्गीय प्राणी चिंताओं से ग्रस्त जीवन बिताता है । पहले स्वयं के लिये इसके बाद अपनी आने वाली पीढ़ी के लिये सदैव चिंतित रहता है । इस वर्ग के लोग अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा प्रदान करना चाहते हैं । उन्हें सभ्यता-संस्कृति का आदर करना एवं अनुशासन में रहना सिखाते हैं । यह वर्ग अपने बच्चों को उच्च शिक्षा प्रदान कर उच्च पद पर देखना चाहता है । यह समाज जीवन में संस्कारों को प्राथमिकता देता है - "यह वह वर्ग है जिसके पास समाज के संस्कारों की पूँजी है । ..... मानव का समस्त ज्ञान - विज्ञान अतीत - वर्तमान इसका ऋणी है । .... आज की विषम परिस्थितियों में उसकी समस्त मेधा उच्च वर्ग द्वारा खरीद ली गयी है अपना शोषण यंत्र चलाने

के लिये । उसका समस्त हृदय निम्न वर्ग द्वारा मांग लिया गया है जीवन-यापन के लिये .... वह दोनों ओर से सीमित होकर सठिया सा गया है । .... वह बाहर से मनुष्य रह गया है भीतर से विवश पशु । इसके उपरांत रीति - रिवाज संस्कार भी इस वर्ग के निराले हैं । समाज में अपना स्थान बनाये रखने के कारण यह वर्ग खोखला होता जा रहा है ।"26

मध्यम वर्गीय समाज शिक्षित समाज माना जाता है । इस समाज में शिक्षा को अधिक महत्व दिया जाता है मध्यम वर्गीय समाज से ही वकील, इंजीनियर जैसे लोग निकलते हैं और समाज के लिये कुछ कर पाते हैं । मध्यम वर्ग को बुद्धिजीवी वर्ग भी कहा जाता है । डा० शम्भूनाथ जी लिखते हैं - "बुद्धिजीवी होने के कारण दोनों वर्गों से इस वर्ग को श्रेष्ठ माना जाता है क्योंकि उच्च वर्णियों का कार्य बुद्धिजीवियों पर ही निर्भर होता है ।"27

मध्यम वर्गीय समाज में आर्थिक रूप से संतुष्टि न होने के कारण इस समाज के लोगों का जीवन क्लेष से भरा होता है किंतु संघर्ष करने में इस वर्ग के लोग पीछे नहीं होते और समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये सर्वस्व कर जाते हैं । इस वर्ग को उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग दोनों का सामना करना पडता है । किन्तु यह वर्ग हार नहीं मानता । "जिसे लोग मध्य वर्ग कहते हैं, उसमें जीवित रहने का संघर्ष भयानक है । इस मध्य वर्ग के पास विशिष्टता का ढोंग है । सम्पन्नता का दिखावा है । इसके पास सामाजिकता है, नैतिकता है । इन सामाजिक और नैतिक मान्यताओं का निर्माता ये मध्य वर्ग ही होता है - ये मान्यताएं केवल इस मध्य वर्ग के सत्य हैं और मान्यताओं को वह अपने सिर पर लादे हुए है । इस मध्यम वर्ग के पैर लडखडा रहे हैं, लेकिन अपने सिर का बोझ उतार फेकने का साहस उसके पास नहीं है ।"28

मध्यम वर्ग के पास पैतृक सम्पत्ति का अभाव रहता है और इस कारण वे आत्म निर्भर होन के लिये पढ - लिखकर नौकरी करके अपना जीवन बिताते हैं किन्तु इनका जीवन अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में ही बीत जाता है । इस प्रकार उच्च वर्गीय समाज आर्थिक स्थिति से सम्पूर्ण तथा निम्न वर्गीय समाज अपने भविष्य से बेखबर आर्थिक चिंताओं से दूर इन दो समाजों के बीच मध्यम वर्ग पिसता रहता है, जो दोनों वर्गों के अधीन अपना मान और प्रतिष्ठा बनाने में जुटा रहता है ।

मध्यम वर्गीय समाज अनेक समस्याओं से ग्रस्त रहता है । कन्या के विवाह के लिये दहेज इकटठा करने में जी तोड प्रयत्न करता है क्योंकि इस समाज में व्यक्तिगत स्पधा रहती है । इसी समाज में ऊँच-नीच, जाति-पाति आदि भेद-भाव देखे जाते हैं । अनेक कुप्रथाएं यथा-बाल-विवाह, दहेज-प्रथा, अंध-विश्वास, जादू-टोना आदि सामाजिक समस्याएं इसी समाज की उपज हैं ।

इस समाज की सबसे बडी समस्या बेरोजगारी की है । उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात भी स्वयं को बेरोजगार पाते हैं । ऐसी स्थिति में वे किसी भी तरह से वेतन पाने के उपाय करते हैं, किन्तु शिक्षा के अनुसार न उन्हें नौकरी मिलती है न वेतन । समय का सताया हुआ इस वर्ग का मनुष्य जीवन के प्रति उदासीन हो जाता है । किन्तु लडता रहता है । आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये इस वर्ग पति-पत्नी दोनों मिलकर नौकरी करते हैं । इन सारी परिस्थितियों में आर्थिक स्थिति को सुधारने में मानसिक रुप से यह वर्ग पीडित रहता है और कभी-कभी अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में अपने परिवार को ढंग से चलाने में कब जमींदारों और पूँजीपतियों के कुचक्र में फँस जाते हैं पता ही नही चलता ।

एक समय था जब यह वर्ग आपसी मेल मिलाप के लिये जाना जाता था । परिवार आपस में मिल जुलकर रहते थे । संयुक्त परिवार की पहचान थी किन्तु समय के साथ आज सब कुछ परिवर्तित हो गया है और आज कोई सम्बन्ध बिना स्वार्थ का नहीं रहा । आर्थिक स्थिति सारे रिश्ते नातों को बदल देती है । धन के अभाव में जैसे सारे बंधन टूटने-बिखरने लगे हैं । आज प्रेम-भाव, आपसी मेल-मिलाप का स्थान धन सम्पत्ति ने ले लिया है । डॉ० शर्मा लिखती हैं "मध्यवर्गीय परिवार के सम्बन्ध में आज एक भिन्न दृष्टिकोण उभरने लगा है । आज्ञाकारी पुत्र, भातृ-प्रेम आदि अर्थहीन हो गये हैं । संयुक्त परिवार टूटने लगे हैं । आज हर व्यक्ति अपनी वैयक्तिकता कायम रखना चाहता है ।"29

निष्कर्ष

इस प्रकार मध्यम वर्गीय समाज अनेक समस्याओं से ग्रस्त रहा है । इस वर्ग का पत्येक व्यक्ति किसी न किसी रुप में समस्याओं से जकडा हुआ है किन्तु यही मध्यम वर्ग हमारे समाज का बुद्धिजीवी वर्ग है । जो इस देश का एक बडा प्रतिनिधि रहा है । इसके अतिरिक्त यह समाज पीढी-दर-पीढी चली आ रही परम्पराओं का अनुसरण करता रहता है । अपने समाज से विरुद्ध जाकर कोई कार्य नहीं कर सकता है और यही कारण है कि इस समाज के विकास की गति धीमी है । फिर भी यह कहना गलत न होगा कि यह समाज का एक संवेदनशील वर्ग है ।

निम्न वर्गीय समाज :- भारतीय समाज में निम्न वर्ग के अन्तर्गत दलित वर्ग, सर्वहारा वर्ग, पीडित वर्ग आदि आते हैं । यह वर्ग पूर्ण रुप से श्रम पर निर्भर रहता है ।"यह समाज का वह भाग है जो अपनी जोविका का उपार्जन श्रम से करता है और अधिकतर इसी वर्ग का शोषण किया जाता है ।"30 यह समाज प्रतिदिन सामज से लडता रहता है । इसका पूरा जोवन यात्नाओं से भरा होता है । अन्य समाज द्वारा यह समाज शोषित किया जाता है । जोवनावश्यक वस्तुओं के लिये यह समाज संघर्ष-रत रहता है । कार्ल मार्क्स ने इस समाज को शोषित वर्ग कहा है उनके मतानुसार - "शोषित वर्ग वह है यदि एक समय की रोटी है तो दूसरे समय की चिंता ने उसे जर्जर कर दिया है । अच्छे घरों में रहना व विलासिता की वस्तुओं को उपलबध करना उनके लिये स्वप्न में भी संभव नहीं लगता ।"3।

निम्न वर्गीय समाज स्वतन्त्र प्रकृति का होता है । इस वर्ग में सभ्यता-संस्कृति, आचरण, आत्म-सम्मान, नीति नियम आदि का अभाव होता है । यह वर्ग उच्च वर्ग की सेवा में जीवन बिताता है अथवा कह सकते हैं कि कुछ हद तक मध्यम वर्ग की भी सेवा करता है और स्वयं को इस वर्ग के निकट करने के प्रयत्न में रहता है ।

उच्च वर्ग से यह वर्ग बहुत दूर होता है । आर्थिक स्थिति इतनी जर्जर होती है कि अपना भरण-पोषण करने में ही पूरा जीवन व्यतीत हो जाता है । और इसी कारण शिक्षा का अभाव इस वर्ग म देखा जाता है । अशिक्षित समाज सभ्यता-संस्कृति तथा

अनुशासन से कोसों दूर होता है । अशिक्षित समाज कुप्रथाओं तथा अंध-विश्वास को जन्म देता है । शिक्षा के अभाव में उन्हें कुछ भी समझा पाना एक दुर्लभ कार्य है । अन्धविश्वास में गहरी आस्था रहती है इस वर्ग में । "यह अंध-श्रद्धा निम्न वर्ग का विशिष्ट लक्षण है परम्परागत अशिक्षा के कारण इनमें तंत्र-मंत्र, जादू-टोने एवं अंधश्विासों की जड इतनी गहरी है कि उनको अपने अधिकारों का ज्ञान कराना सरल कार्य नहीं है ।"32

अंधश्रद्धा एक ऐसी बीमारी है जिसका कोई उपाय नहीं है । इनकी मानसिक स्थिति अंधश्रद्धा में इतनी जकडी हुई होती है कि यह वर्ग किसी भी प्रकार की विपदा, घटना अथवा समस्या को अंधश्रद्धा की दृष्टि से देखता है । ऐसे में इन्हें कुछ समझाना भी एक समस्या है । बुद्धिहीनता शिक्षा के अभाव का ही परिणाम है । शिक्षा के अभाव में ही ये वर्ग अनेक सामाजिक अधिकारों से वंचित रहता है ।

स्कूली शिक्षा से निम्न वर्गीय समाज के बच्चे वंचित रहते हैं । यदि वे किसी भी तरह से बच्चों को सरकारी स्कूल में डाल भी देते हैं तो ऐसे स्कूल के अध्यापक भी कभी-कभी इतने गैर-जिम्मेदार हो जाते है कि बच्चे गुणीं होने बजाय उनमें बुरी आदतें आ जाती हैं और इस प्रकार यह समाज वहीं का वहीं रह जाता है ।

निम्न वर्गीय समाज अनेक समस्यओं से भरा पडा है । यथा-आर्थिक समस्या, अंधश्रद्धा, बेरोजगारी, शिक्षा का अभाव आदि । इन सारी समस्याओं से लडता हुआ यह समाज अन्य समाज का सामना करता है । क्या निम्न वर्ग में पैदा होना एक अभिशाप है ? निम्न वर्ग का उदय कहाँ से हुआ इस विषय में डॉ० अर्जुन चव्हान लिखते हैं "जैसे ही पूँजीवादी अर्थ व्यवस्था का विकास होता गया वैसे समाज में तीसरा वर्ग अपना अस्तित्व ग्रहण करने लगा यह तीसरा वर्ग है निम्न वर्ग ।"33

गाँव में जीवन यापन करने वाला यह निम्न वर्गीय समाज प्रत्यक क्षण समस्याओं से घिरा रहता है । गाँव के जमींदार इन्हें जीने नहीं देते । गाँव का किसान परिवार तपती दोपहरी में खून पसीना बहाकर सूखी-बंजर भूमि को हरियाली में परिवर्तित करता है और वही किसान पेट भर खाने से वंचित रहता है । ऋण चुकाने में ही इन किसानों का जीवन नष्ट

हो जाता है । ज़मींदारों के अत्याचार इन किसानों को अपनी ही भूमि पर मज़दूरी करने को मजबूर कर देते ह । गरीबी इनका आखिरी साँस तक पीछा करती है ।

किसान के अतिरिक्त इस समाज के अन्य लोग रोजा-रोटी के लिये छोटे-छोटे काम करते हैं जैसे- जूते गांठना, डलिया या टोकरी बनाना, बांस छीलना आदि । इस समाज को जब अपने इन कामों से आर्थिक संतुष्टि नहीं मिलती तब ये समाज शहर की ओर पलायन करता है किन्तु शहरों का जीवन और भी अधिक कष्टों से भरा है ।

शहरों में निम्न वर्गीय समाज के अनेक रूप देखने को मिलते हैं । कहीं शहर में छोटी-मोटी झोंपडी या तम्बू बनाकर उसम रहने को मजबूर हैं तो कहीं सडकों के आस-पास ही अपना जीवन गुजार रहे हैं । बेरोजगारी इन्हें शहरों की ओर आकर्षित होन पर मजबूर तो करती है किन्तु यहाँ भी इन्हें अशिक्षित होने के कारण बेगार ही रहना पडता है । जीवन जीने के लिये ये लोग फैक्ट्री, मिलों, कारखानों आदि में मजदूरी करते हैं ।

बेरोजगार निम्नवर्गीय समाज कभी-कभी बुरी आदतों का शिकार भी हो जाता है । जीवन की निराशा उसे नशा करने और जुआ खेलने को मजबूर करती है । कभी-कभी तो ये लोग चोरी-डकैती, काला धन्धा, काला बाजारी ऐसे दष्कर्म भी करते हैं और उसी काम को जीवन भर का पेशा बना लेते हैं ।

महानगरों में निवास करने वाले निम्न समाज की नारी अनेक कठिनाइयों का सामना करती हुई जीवन बिताती है । पेट की आग कुछ भी करने को मजबूर करती है । अपने परिवार को चलाने के लिये यहाँ-वहाँ काम करती है । वहाँ भी इनका शोषण ही होता है और ओहदे पर आसीन बड-बडे आदमी अपनी हवस का शिकार बनाते हैं । हालात की सतायी हुई नारी कभी-कभी स्वयं ही वैश्यावृत्ति की ओर आकर्षित हो जाती हैं और अनेक दुखों को सहती हुई अपने ही हाथों अपना जीवन नरक बना देती हैं । इसके पीछे इनका शौक नहीं इनकी मजबूरी होती है ।"अधिकतर निम्न वर्ग से ही ऐसी महिलाएं अनेकानेक मजबूरियों से अथवा समस्याओं से त्रस्त होकर ही ऐसे घृणित पेशे में आ जाती हैं ।"34

दर्दनाक स्थितियों और पीड़ाओं को सहन करती ये नारियाँ किसी न किसी कारण वश ऐसा घृणित कार्य करती हैं और समाज द्वारा धुत्कारी भी जाती ह । निम्न

वर्गीय समाज की निम्न स्तरीय नारी क्षण-क्षण तिरस्कृत होती है । वैश्याओं के दुखात्मक जीवन के विषय में पाश्चात्य लेखिका सीमोन द बोडवार कहती है -"चाहे वैश्या वैध रूप से पुलिस की देख-रेख में रहे, चाहे अवैध रूप से छिपकर अपना कार्य करे, उसे हमेशा अछूत की तरह देखा जाता है।"35

निम्न वर्गीय समाज अनेक समस्याओं से जकड़ा हुआ है। निर्धनता के अतिरिक्ति मानसिक स्थिति के कारण भी इस समाज में समस्याएं बनी हुई हैं । "निर्धनता, पीड़ा एवं दःख, विवशता, अंधविश्वास, अथक मेहनत, साधन हीनता, शोषित, अत्याचार अन्याय सहन करने की क्षमता, प्रतिकार की भावना से हीन, अशिक्षित, अनपढ आदि विशेषताएं हैं ।"36

दलित समाजः-

भारतीय समाज में दलितों का शोषण एक आम बात हो गई है । समाज द्वारा सताया गया, नकारा गया समाज ही दलित समाज कहलाता है । इन्हें न शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार है और न ही स्वतंत्रतापर्वक कोई कार्य कर सकते हैं । प्रत्येक स्थिति में इसे अयोग्य ही समझा जाता है । भारतीय समाज में जिसे अछूत माना गया है वह दलित है । दलितों को पिछडा या निम्न कहकर उपेक्षित किया गया है । दलित कोई जन्म से नहीं होता, दलित उसे समाज बनाता है । स्मृतियों में लिखा है - "जन्म से कोई शूद्र या सवर्ण नहीं होता, व्यक्ति की जाति नहीं, ज्ञान देखना होगा आदि बातें जन्म, कुल, वंश श्रेष्ठता को नकारती हैं....फिर भी झूठी मान्यता अहं, विकृत मनोवृत्ति ने उच्च नीचता को पाला-पोसा जाति-व्यवस्था को बल दिया परिणामतः अखंड एक समाज का सपना टूट गया । भेद-भाव से प्रभावित मानव-समाज बना उसका एक अंग है 'दलित' ।"37

दलित वर्ग अपनी इच्छानुसार कोई काम भी नहीं कर सकता है, वह वही कर सकता है जो पीढो-दर-पीढ़ो उसके पूर्वज करते आये हैं । लोगों की सेवा करना, कचरा उठाना, गंदी नालियों को साफ करना इत्यादि । इसके अतिरिक्ति मरे हुये पशुओं की

चमडो से वस्तुएं बनाकर, मलमूत्र उठाकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं । जूठन के बदले भोजन प्राप्त कर अपना पेट भरते हैं । यह दलित वर्ग लोगों द्वारा थोपे गये नीति-नियमों का पालन करता है ।

हिन्दू समाज के अन्तर्गत शूद्र को दलित कहा गया है, वह अछूत है और जिसके सभी कार्य एक दायरे में हैं । शूद्र को तो प्राचीन काल से ही अछूत माना गया है । वैदिक युग में भी उसे यज्ञ करने का या विद्या ग्रहण करने का अधिकार नहीं था "वैदिक काल में शूद्र यज्ञ आदि नहीं कर सकते थे, वे केवल पालकी ही ढोते थे । शूद्र तो एक चलता-फिरता श्मशान है, उसके समीप वेदाध्ययन नहीं करना चाहिये ।"38

यह दलित वर्ग उच्च वर्ग की सेवा में रत रहता है और सेवा के बदले में झूठा खाना, फटे-पुराने कपड आदि प्राप्त कर संतुष्ट हो जाता है । दलित समाज समस्याओं से परिपूर्ण है । प्रत्येक क्षण घृणा की दृष्टि से देखा जाने वाला यह समाज अनेक बन्धनों में बंध कर रह गया है । यह समाज न धन संग्रहित कर सकता है न ही अपने लिये किसी भी प्रकार की कोई व्यवस्था कर सकता है । यदि कोई व्यक्ति अपनी इच्छा से कोई दूसरा व्यवसाय अथवा काम करना चाहे तो नहीं कर सकता उसे वही करना होगा जो परम्परानुसार उसके पूर्वज करते आये हैं ।

"दलित शब्द का अर्थ-जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीडित, शोषित, सताया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट मर्दित, वस्त हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि ।"39

दलित समाज अपने तक ही एक सीमित समाज होता है, जिसका अन्य समाज से कोई सामाजिक सम्पर्क नहीं होता । अच्छा पहनने और अच्छा खाने का अधिकार नहीं होता । अस्पृश्य कहकर प्रत्येक समाज से इसे पृथक रखा गया यहाँ तक कि यह दलित समाज कपड धुलवाना, बाल कटवाना इत्यादि जैसे काम भी पेशेवर लोगों से नहीं करा सकता । धार्मिक अनुष्ठानों, पवित्र स्थलों, मन्दिरों, गिरिजाघरों आदि से भी इन्हें दूर रखा गया । यह मन्दिरादि के बाहर खड रहकर ही केवल दर्शन कर सकता है । यह समाज ब्राह्मण आदि उच्च जाति द्वारा घृणा की दृष्टि से देखा जाता है ।

डॉ० नर्मदेश्वर प्रसाद ने 'जाति-व्यवस्था' नामक ग्रन्थ में मनुस्मृति का उल्लेख करते हुए बताया है कि "अस्पृश्यों को किसी भी पकार की धार्मिक राय नहीं दी जाती थी । उन्हें देव-भोग का प्रसाद भी नहीं दिया जाता था । जो व्यक्ति अस्पृश्यों को धार्मिक आख्यान आदि सुनायेगा वह स्वयं अंतवृत्त नामक नरक में जायेगा । ब्राह्मण उनके यहाँ श्राद्ध आदि करने नहीं जा सकते ।"40

प्रत्येक काल में दलितों को हीन दृष्टि से ही दखा गया है । अन्तर केवल इतना ही रहा कि इनका नामकरण समयानुसार परिवर्तित होता गया किन्तु दृष्टि नहीं बदली । कभी चमार या भंगी, कभी अछूत, कभी असपृश्य तो कभी हरिजन आदि नामों से पुकारा गया है । प्रत्येक युग में ब्राह्मणों ने स्वयं को सर्वोपरि माना है । दलितों की छाया से भी स्वयं को अपवित्र हुआ मानते थे । भारतीय समाज संकुचित विचारों के कारण वर्गों एवं जातियों में बंटकर, बिखर कर रह गया है ।

किसी भी समाज अथवा वर्ण के संकुचित विचार रुढ़िवादी परम्परा का अनुसरण करते हैं । उसी प्रकार दलित समाज अपनी परम्परानुसार आगे बढता रहा किन्तु उसने विकास इसलिये नहीं किया क्योंकि वे अपने पूर्वजों की लकीर को पीटते रहे । बाह्मणवादी विचारों ने इन दलितों के मस्तिष्क संकुचित रख उन्हें अपनी सेवा में रत रखा । इसके अतिरिक्त अपने से नीची जाति यथा क्षत्रिय, वैश्य आदि को इन शूद्र तथा अतिशूद्र जाति के विरुद्ध खडा किया । इस विषय में ज्योतिराव फुले के विचारानुसार "ब्राह्मण पुरोहितों ने क्षत्रियों से कहा कि तुम केवल हमसे छोटे हो, किन्तु वैश्य और शूद्र से बडे हो । हम तुम्हारा उद्धरा करेंगे तुम्हारे शासन की भी रक्षा करेंगे । क्षत्रियों ने वैश्यों से कहा कि तुम शूद्र तथा अतिशूद्रों से बडे हो और शूद्रों से कहा कि तुम चिन्ता क्यों करते हो ? ब्राह्मण, क्षत्रियों तथा वैश्यों को नाना विधि-निषेध की झंझट है तुम्हे कुछ नहीं है । तुम जैसा चाहो रहो, बस अन्य तीन वर्णों की सवा करके मुक्त हो जाओगे ।"41

दलित समाज के अन्तर्गत भी हम ऊँच-नीच की भावना देखते हैं यथा - एक वर्ग है जो मलमूत्र आदि साफ करता है, मरे हुए जानवर आदि को उठाकर फेंकता है जिन्हें समाज भंगी, चमार, मेहतर आदि से सम्बोधित करता है । अतः इन्हें अछूत, अस्पृश्य

माना जाता है । धोबी, कुम्हार, बढई, नाई आदि स्वयं को इनसे थोडा उच्च मानते हैं जो कि धोबी इनके कपड नहीं धोता, नाई इनके बाल नहीं काट सकता आदि । इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी जातियाँ भी हैं जो पेट भरने के लिये गलत काम करती हैं और जो तथापि ऐसा करने को विवश भी हैं ।

दलित जाति के लिये अनेक विद्वानों ने परिभाषाएं दीं हैं यथा - डा० म० ना० वानखेड का मानना है का मानना है - "जो-जो शोषित हैं, श्रमजीवी हैं, वे दलित हैं ।"42

प्रभाकर माण्डे कहते हैं - "जिनका मनुष्य के नाते जीने का हक छीन लिया, वे दलित हैं।" 43

प्रो० केशव मेश्राम मानते हैं "हजारों बरस जिन पर अन्याय हुआ है । ऐसे अस्पृश्यों को दलित कहना चाहिये ।"44

दलितों का जीवन शोषण और विपन्न्ता से भरा हुआ है फिर चाहे वह शोषण सामाजिक हो, राजनीतिक हो, सांस्कृतिक हो या आर्थिक । कस्बों या गाँव में पंचायती राज उसे जीने नहीं देता । शहरों, नगरों में भी वो उच्च वर्ग द्वारा धत्कारा जाता है । प्रत्येक स्थिति में दलितों का ही शोषण क्यों ? जात-पात की समस्या एक ऐसी समस्या है कि इसका निवारण यदि नहीं हुआ तो भारतीय समाज की स्थिति और दुर्बल हो जायेगी । इस विषय में डॉ० परमार जी लिखते हैं, "भारतीय इतिहास इस बात का साक्षी है कि जाति-पांति की समस्या ने क्षय रोग की भाँति हमारे समाज को दुर्बल और जर्जर कर दिया है । उसकी अवनति का ह्रास का कारण भी यही है । यह अछूतपन या अस्पृश्यता का कोढ हमारे समाज के अंग पर एक नासूर की भाँति है । देश की आबादी के एक बहुत बड भाग को अछूत बनाकर उन्हें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक अधिकारों से वंचित कर देना किसी भी सूरत में औचित्य की सीमा के अन्तर्गत नहीं आ सकता ।"45

निष्कर्ष :-

अंततः कहा जा सकता है दलित कोई भी जन्म से नहीं होता, दलित की संज्ञा उसको समाज ने दी है दलित अथवा अस्पृश्यता एक ऐसा रोग है जिसका निवारण अति आवश्यक हो

गया है किन्तु इसका निवारण तब तक नहीं किया जा सकता जब तक प्रत्येक समाज का प्रत्येक व्यक्ति ह्रदय से अनुभव न करे कि हम एक ही माटी के बने पुतले हैं और कोई भी कार्य छोटा या बडा नहीं होता । एक जुटता समाज को एक बंधन में बाँधती है । इस रोग का निवारण कोई कानून भी नहीं कर सकता । अस्पृश्यता के सम्बन्ध में गाँधी जी की मान्यता - "अस्पृश्यता कानून के बल से कभी दूर नहीं होगी वह तभी दूर होगी जब हिन्दुओं का बहुमत इस बात को अनुभव कर ले कि अस्पृश्यता ईश्वर और मनुष्य के विरुद्ध एक अपराध है और इसके लिये वह लज्जित है ।"46

आदिवासी समाज :-

आदिवासी समाज पहाडो जैसे दर्गम स्थानों, वनों व जंगलों में निवास करता है । इनका जीवन अत्यन्त कष्टदायी होता है । भोजन की खोज में ये लोग जंगलों में यहाँ-वहाँ भटक कर फल व कंदमूल आदि से स्वयं को संतुष्ट करते हैं । प्रकृति एवं आदिवासी एक दूसरे के पूरक हैं । जहाँ आदिवासियों ने वनों को अपना परिवार समझकर उसका संरक्षण किया है तो वहीं प्रकृति ने भी इन आदिवासियों का पोषण किया है ।

आदिवासियों के सम्बन्ध में डा० अशोक डी० पाटिल लिखते हैं "आदिवासी प्रकृति के पुत्र हैं, तथा पर्वतीय अंचल उनके पारिवारिक आवास ह । यहाँ वे उन्मुक्त विचरण करते रहे हैं उनको न केवल सामाजिक व्यवस्था बल्कि पारम्परिक प्रशासनिक व्यवस्था भी अतीत में बाह्य प्रभाव तथा हस्तक्षेप से मुक्त थी इसका अर्थ ये नहीं है कि शेष आबादी के साथ उनका कोई सम्पर्क नहीं था । सत्य तो ये है कि वनों व पर्वतीय अंचल पर उनके अधिकार तथा सत्ता को प्राचीन राजाओं-महाराजाओं ने स्वीकार किया एवं रक्षा की । यही कारण है कि आदिवासी और गैर आदिवासी अच्छे पडोसियों की तरह सदियों तक साथ-साथ रहते आए हैं ।"47

आदिवासी समाज की स्थिति अत्यन्त दयनीय होती है इस कारण इनका समय निरंतर काम में ही व्यतीत होता है । अन्य व्यर्थ की बातों इत्यादि से उन्हें कोई

मतलब नहीं होता । "वे हमेशा काम में होने के कारण उनको गपशप आदि करने के लिये समय नहीं रहता आदिवासी लोगों को ज़्यादा बातें करने की आदत नहीं इसलिये वे इतर लोगों से गपशप तथा विचार - विनिमय करते दिखाई नहीं देते ।"48

साधारण से साधारण जीवन व्यतीत करने के लिये भी आवास एक प्रमुख आवश्यकता है । इसी प्रकार आदिवासी समाज भी स्वयं का घर रखने का महत्व समझता है । इसलिये भले ही इन लोगों का सारा दिन घर से बाहर गुजरता हो किन्तु इनके टूटे-फूटे या जैसे भी अपने घर होते हैं । "आदिवासियों के लिये मकान प्रायः रैन बसेरा ही होता है । दिन में उनकी अधिकांश क्रियाएं घर से बाहर ही सम्पन्न होती हैं । इसका अर्थ यह नहीं है कि मकान का उनके लिये महत्व नहीं होता है । मकान चाहे छोटा या बडा, कच्चा हो या पक्का प्रत्येक आदिवासी का अपना निजी होता है ।"49

आदिवासी समाज वनों एवं पर्वतीय स्थानों में अभावपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं । विपन्नतावश आदिवासी समाज किसी भी मौसम के अनुरूप किसी भी प्रकार का प्रयोजन नहीं कर पाता फिर चाहे वह शीतकाल की गला देने वाली सर्द हवाएं हों, ग्रीष्मकाल की कडक धूप हो अथवा मूसलाधार वर्षा । आदिवासी समाज में इन सबको सहन करने की अपार शक्ति होती है । आदिवासी लोग किसी भी प्रकार का कष्ट सहन करने की क्षमता रखते हैं । सहन शक्ति की यदि बात करें तो गुदना गुदवाने की परम्परा आदिवासी समाज में है जिसे गुदवाते समय शरीर को अत्यधिक पीडा होती है । ये पीडा असहाय होती है जिसे हर कोई सहन नहीं कर सकता फिर भी परम्परागत रूप से यह समाज इसका अनुसरण करता आ रहा है और ये इनकी एक पहचान है ।

आदिवासी समाज में श्रंगार का भी अपना एक महत्व है । सजना, संवरना, आभूषण पहनना आदि शौक आदिवासी महिलाओं और पुरूष दोनों में पाया जाता है । महिलाओं का गुदना गुदवाना भी श्रंगार के अन्तर्गत आता है । इस समाज की महिलाएं ऐसा मानती हैं कि गुदना गुदवाने के पश्चात महिलाओं की सुन्दरता और बढ़ जाती है । किसी विशेष अवसर अथवा त्यौहारों पर ये आदिवासी लोग स्वयं को पूर्ण रूप से सज्जित करते हैं । इसके

अतिरिक्त आदिवासी समाज की महिलाएं और पुरुष अपनी हैसियत के अनुसार आभूषण भी पहनते हैं ।

आदिवासी समाज के पुरुष नशा आदि भी करते हैं । इसके अतिरिक्त महिलाएं भी मद्यपान करती हैं । शराब आदि ये लोग स्वयं ही बनाते हैं । "आदिवासियों को अपने वास्तकि उपभोग के लिये स्वयं शराब बनाने की अनुमति प्राप्त है । "50 मांस, मछली आदि खाने का शौक भी ये लोग रखते हैं । कभी बाजार से लाकर तो कभी जंगली जानवरों का शिकार करके अपना शौक पूरा कर लेते हैं ।

इसके अतिरिक्त आदिवासियों के अन्य भोजन भी हैं । "कोदों, कुटकी प्रायः सभी आदिवासियों का विशष्ट भोजन है । यह अनाज कम पानी में कंकड, पत्थर युक्त भूमि पर कम समय में पैदा होता है । अभाव में जीवन यापन करने वाले आदिवासियों के लिये मिठाई दुर्लभ है । इसका विकल्प मीठी थुली (दलिया) है इसे गेहूँ को मोटा पीसकर, शक्कर या गुड के साथ पानी में उबाल कर पकाया जाता है । यदि उपलब्ध हो तो दूध मिलाकर गेहूँ के साथ मक्के की दलिया भी पसन्द करते हैं ।"51

आदिवासी समाज एक परिवार के समान जीवन व्यतीत करता है । कोई भी आपत्ति अथवा विपदा आने पर एक जुट होकर उसका सामना करते हैं । एक भाषा बोलते हैं और एक ही संस्कृति अपनाते हैं । विवाह सम्बन्धी प्रसंग, तीज-त्यौहार आदि सभी में एक नियम का पालन करते हैं । ये लोग अन्तर्विवाह में विश्वास रखते हैं । इस कारण इन लोगों का परस्पर सम्बन्ध जुडा रहता है । इस पद्धति के अन्तर्गत ये अपने समाज को और भी सुदढ कर पाते हैं । इस विषय में डा० शिवतोष दास जी लिखते हैं - "साधारणतया आदिसवासी समाज जनजाति अन्तर्विवाह-सिद्धान्त का समर्थन करती है और उसके सभी सदस्य अपनी ही जनजाति के अन्तर्गत विवाह करते हैं कई गोत्र मिलकर आदिवासी जनजाति की रचना करते है । प्रत्येक गोत्र के सदस्यों का परस्पर रक्त सम्बन्ध जुडा रहता है ।"52

आदिवासी समाज के अन्तर्गत अनेक जनजातियाँ पाई जाती हैं जिनमें भील प्रमुख है जो मुख्य रुप से राजस्थान में पाई जाती है । वर्तमान में गुजरात भी इनका निवास स्थान है । इसके अतिरिक्त खरिया, सन्थाल, गौड, गदब, उरांव, थारु तथा मूण्डा

आदि । किन्तु आदिवासी समाज में भील सबसे बडा जाति मानी जाती है । भील जाति भगवान शिव की सबसे बडा भक्त है क्योंकि इनका मानना है कि भील जाति का विकास भगवान शिव के कारण ही हुआ है नहीं तो आज भील जाति का एक अंश भी नहीं होता ।

निष्कर्ष :-

आदिवासी समाज मे अनेक जातियों की विभिन्नता के बावजूद एकता दिखाई देती है । इसके अतिरिक्त ये समाज हिन्दू धर्म का ही अनुसरण करता है इसमें संदेह नहीं । त्यौहार मनाने की यदि बात करें तो यह समाज भी होली, दीवाली, बसन्त, आदि बडे ही उत्साह तथा आनन्द विभोर होकर मनाता है । देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करते हैं । इनके घरों के आंगन में भी तुलसी का पौधा आदि होता है, ये लोग भी हिन्दू धर्म के अन्य समाजों की भाँति भगवान राम, कृष्ण और शिव जी की पूजा करते है जिनमें अधिकतर भक्त शिव जी के पाये जाते हैं ।

भारतीय समाज पर राजनीति का प्रभाव :-

राजनीति का कोशगत अर्थ है "राजनीति सम्बन्धी, राज्य की वह नीति जिसके अनुसार प्रजा का शासन तथा पालन और अन्य राज्यों से व्यवहार होता है ।"53 उसी प्रकार राजनीति को परिभाषित करते हुए ईस्टर्न कहते हैं "वे समस्त प्रकार की गतिविधियाँ राजनीति हैं, जो सामाजिक नीति के निर्माण और क्रियान्यवयन में अन्तर्ग्रस्त होती हैं ।"54

उसी प्रकार "राजनीति का पर्यायवाची शब्द अंग्रेज़ी पॉलिटिक्स (politics) होता है जो यूनानी भाषा के 'polis' शब्द से बना है, जिसका अर्थ उस भाषा में नगर, अथवा राज्य, धीरे-धीरे राज्य का स्वरूप बदला, नगर का स्वरूप बदला और राज्यों का स्थान राष्ट्रीय राज्यों ने ले लिया और राज्य की नीति राजनीति बन गई और राजनीति राज्य से सम्बन्धित विधा हो गई ।"55

किसी भी देश की प्रशासन व्यवस्था राजनीति पर निर्भर होती है । राजनीति समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है अतः समाज का राजनीति से प्रभावित होना स्वाभाविक है । राजनीतिक गतिविधियों का उल्लेख प्रत्येक युग में प्राप्त होता रहा है । यद्यपि

रामायण, महाभारत, कुरान तथा पुराण आदि में भी राजनीतिक गतिविधियों का विवरण मिलता है ।

राजनीतिक दाँव-पेच के तहत ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारत में व्यापार करने के उद्देश्य से आयी और भारत को पराधीनता की जंजीरों में जकड़ दिया । ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपनी राजनीति का जाल बिछाकर भारतीय समाज को आर्थिक रूप से कमज़ोर बना दिया । अंग्रेजों ने भारतीय जनता पर अनेक अत्याचार करना आरम्भ कर दिये और भारत में 'फूट डालो,राज करो' वाली नीति अपनायी जिसके अन्तर्गत साम्प्रदायिकता की भावना ने प्रबल रूप धारण कर लिया तथा अपनी इस कूटनीति में वे सफल भी हुए ।

अंग्रेज़ सरकार की घातक नीति फूट डालो, राज करो ने विभाजनवादी प्रवृत्ति को जन्म दिया जिसके अन्तर्गत भारतीय ज़मींदारो, बड़े-बड़े साहूकारों, नेताओं आदि को अपने पक्ष में करने के लिए अनेक प्रकार के लालच दिये गये । उनको पूर्ण रूप से अपने विश्वास में लिया गया । "सन 1939 में अंग्रेज़ों की कूटनीति एवं षडयंत्रकारिता का साक्षात परिचय तब मिला जब भारतीय प्रतिनिधियों की अनुमति के बिना ही उसे मित्र राष्ट्रों के साथ युद्ध में घसीट लिया गया ।"56

अंग्रेजों ने भारतीय समाज में अपनी कूटनीति के बल पर असंतोषनजक स्थितियां उत्पन्न कीं । फूट डालो, राज करो की नीति के फलस्वरूप मुस्लिम लीग की स्थापना हुई । मुस्लिम लीगियों ने मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध भड़काना शुरु किया । तत्कालीन परिस्थिति को दृष्टि में रखते हुए जिन्ना मुस्लिम जनता के हिमायती बन गये । जिन्ना ने अपनी कूटनीति के बल पर मुसलमानों को अपने जाल में फँसाने के भरसक प्रयास करने शुरु कर दिये । "ऐसे समय में जिन्ना साहब ही लीग के सर्वेसर्वा बनकर रह गये एवं वे मुस्लिम युवक एवं जनता को आकर्षित करने के लिए 'इस्लाम खतरे में है' का बयान करने लगे ।"57

देश विभाजन के लिए जिन्ना ने कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी । अंग्रेजों ने अपनी नीति के फलस्वरूप दो पृथक राज्य की माँग के लिये हिंदू-मुसलमान दोनों को बाध्य किया । जिन्ना ने इस बात का समर्थन किया । और देश-विभाजन के पक्ष में उन्होंने अपना बयान दे दिया । "सभा एवं धर्म के नशे में चूर जिन्ना ने देश-विभाजन की

खलकर बात की । "हिंदुस्तान हिंदुओं के लिए है.....ये हैं हिंदू और इनकी सरकार है हिन्दू सरकार ।"58

8 अगस्त 1944 'अखिल भारतीय कांग्रेस समिति' ने यह प्रस्ताव पास किया गया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये भारत में अंग्रेज़ी शासन का समाप्त होना अत्यन्त आवश्यक है । गाँधी जी ने इस विषय पर 70 मिनट का भाषण दिया तथा उन्होंने भारतीय जनता को 'करो या मरो' का उपदेश दिया । जिसके फलस्वरूप भारतीय जनता ने अंग्रेज़ी शासन के खिलाफ विद्रोह किया । देश का विभाजन करने में जिन्ना अपनी कूटनीति के वार किये जा रहे थे । और गाँधी जी देश को अंग्रेज़ों के चंगुल से छुड़ाने में लगे हुए थे । "मोहम्मद अली जिन्ना ने कांग्रेस के 'भारत छोड़ो' के नारे के साथ-साथ मुस्लिम लीग का 'भारत का विभाजन करो और चले जाओ' का नारा बुलन्द किया । गाँधी जी ने जिन्ना को समझाने का बहुत प्रयत्न किया, लेकिन वह अपनी हठधर्मिता पर अड़ा रहा तथा देश को साम्प्रदायिकता की आग में धकेल दिया ।"59

मुस्लिम लीग तथा कांग्रेस में समझौता कराने के प्रयत्न किये गये । किन्तु यह प्रयत्न असफल साबित हुए । मुस्लिम लीगियों ने अपने पूरे ज़ोर-धड़ल्ले से मुसलमानों को हिन्दुओं के खिलाफ़ भड़काकर पाकिस्तान के लिए वोट की माँग की । कांग्रेस ने मजबूरीवश पाकिस्तान-निर्माण की माँग स्वीकार कर ली । अतः अंग्रेज़ अपनी कूटनीति में सफल हुए जिसका परिणाम था देश विभाजन । 15 अगस्त 1947 को देश का विभाजन हो गया । राजनीतिक शक्तियाँ सर चढ़कर बोलने लगीं । राजनीति के बल पर आम जनता पर अमानवीय व्यवहार किये जाने लगे ।

इस राजनीति का प्रभाव यह हुआ कि देश भर में साम्प्रदायिकता की आग फैल गई । हिन्दू-मुस्लिम एक-दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखने लगे । गांधी जी यह विभाजन नहीं चाहते थे । क्योंकि वह सत्य एव अहिंसा के प्रेमी थे किन्तु इस प्रकार की नीति ने पूरे देश को हिंसक बना दिया । देश के विभाजन के साथ अत्यंत भीषण नरसंहार भी हुआ जो कि गांधी जी नहीं चाहते थे । राजनीतिक अधिकारों ने पाकिस्तान-निर्माण में सहयोग दिया जिससे भारतीय सामाजिक जनता अत्यधिक प्रभावित हुई । देश भर में हाहाकार

मच गई । हिन्दू-मुस्लिम दंगे खुलेआम होने लगे । देश में शान्ति बनी रहे हेतु देश का विभाजन किया गया किन्तु देश विभाजन के बाद इतनी भयंकर स्थिति उत्पन्न हुई जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी । डॉ० लोहिया इस सम्बन्ध में लिखते हैं - "हिन्दू-मुसलमान दंगे न हो, इसलिए देश का विभाजन किया । जिसको रोकना चाहते थे । वही विभाजन से इतनी अधिक मात्रा में हुआ कि आदमी बुद्धि या शुचिता से निराश हो गया । औरतें, बच्चे और मर्द मारे गये । अक्सर इतना पागलपन हुआ कि लगता था हत्यारे जैसे क़त्ल और बलात्कार के नए तरीके हासिल करना चाह रहे हो । डेढ़ करोड़ लोग बेघर-बार कर दिये गए । उन्हें और घर-बार के लिए ऐसे क्षेत्रों में जाना पड़ा जहाँ अपनत्व की कमी थी । जबरन या स्वेच्छा या समूचे इतिहास में शायद सबसे बड़ा देश परिवर्तन था ।"60

स्वतंत्रता के पश्चात राजनीति के दांव-पेच व्यक्तिगत होते नज़र आये । सत्ता स्वार्थी और लालची होती दिखाई दी । इन नेताओं ने जनता का हित त्याग कर स्वहित की नीति अपनाई । गाँधी जी ने जिस राम राज्य की कल्पना की थी वह कहीं लुप्त हो गई । राजनीति का स्वरूप ही बदल गया । देश आज़ाद होने के बाद भी दंगे बन्द नहीं हुए, बल्कि दंगों में और बढ़ौतरी हुई । अवसरवादी और स्वार्थी नेताओं ने चाहे वो हिन्दू हो अथवा मुस्लिम दोनों ने ही धर्म को आधार बनाकर राजनीतिक हथकंडे अपनाए जिसके फलस्वरूप साम्प्रदायिक दंगे और ज़्यादा हुए । राजनीतिक स्वार्थ और संकीर्ण विचारधारा ने देश को पतनोन्मुख बना दिया । "भारत तेज़ी से विनाश की ओर बढ़ रहा है । देश को उन नेताओं ने कुचक्रों के जाल में फँसा दिया है, जो अपनी नेतागीरी कायम रखने के लिए धर्म की दुहाई दे रहे हैं । आज देश में धर्म स्वार्थों का धर्म है, ईश्वयरीय नहों ।"61

देश को स्वतंत्र कराने में अनेक देशभक्तों एवं देशवासियों का योगदान है । किन्तु स्वतंत्रता के बाद जो कांग्रेस सरकार बनी, उसके बाद जनता में निराशा पैदा हुई । कांग्रेस में दल बदलू और अवसर वादी नेताओं की खपत अधिक दिखाई दी । परिस्थितयाँ और गम्भीर होती चली गयीं । इंदिरा गाँधी का बिना बोले आपातकाल की घोषणा करने के कारण साधारण जनता में रोष उत्पन्न हो गया । इस आपातकाल के कारण मनुष्य के अधिकारों का हनन होता दिखाई दिया । इसके अतिरिक्त स्वार्थी नेताओं एवं पुलिस ने भी आम जनता

के साथ पशुता दिखाई । "इंदिरा गांधी के शासन काल में ही अधिकांश शासक वर्ग ने प्रजा के साथ फासला बना लिया जो निरंतर बढ़ता ही गया । जनता में अविश्वास जाग्रत हुआ । भ्रष्टाचार, दायित्व हीनता एवं बेईमानी का नंगा नाच होने लगा । इसी समय भाषाविवाद, आंतरिक सीमारेखा धर्म-जाति भेद, उपजाति को महत्वपूर्ण स्थान देकर अन्यान्य प्रांतों में अराजकता का रूपांतर जन आंदोलन मे हुआ । ऐसी संघर्षमय पृष्ठभूमि में अपराध की वृत्ति घर कर बैठी । समाज में बुरी प्रवृत्तियों की वृद्धि दिनों दिन होती गयी और उसकी परिणति भी उतनी ही भयानक और हानिकारक थी । काँग्रेस को उसका नतीजा भी भुगतना पड़ा । सन 1967 के चानव में उसे परास्त होना पड़ा ।"62

देश की स्थिति आज भी कष्टमय है । जहाँ राजनीति का प्रयोग धर्म की आड़ में किया जा रहा है । देश की बागडोर ऐसे लोगों के हाथ में हो जो स्वान्तः सुखाय का अनुसरण करते हों तो उस देश का क्या होगा ? देश के लिए यह एक बड़ी विडम्बना है कि आज का नेता केवल अपनी कुर्सी से प्यार करता है । आज उन नेताओं को स्मरण करते हैं जो राजनीति में अपना प्रथम कर्तव्य देश और देश की जनता के प्रति निभाते थे । आधुनिक युग में प्रत्येक नेता बेईमानी, स्वार्थ एवं अवसरवादी चेतना से परिपूर्ण है । गांधी जी के आदर्श कहाँ है ? कहाँ है वह स्वर्ण भारत जिसका सपना गाँधी जी ने देखा था । न आज देशभक्त है, न क्रान्तिकारी और न ही गाँधी जी के आदर्शों पर चलने वाला नेता । कहना ग़लत न होगा कि आज की राजनीति ने ही देश को खोखला कर दिया है ।

भारतीय समाज पर धर्म का प्रभाव :-

धर्म युगों-युगों स मानव संस्कृति का अंग रहा है । प्रायः सभी युगों में, सभी देशों में लोग धर्म को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं । धर्म का अंग्रेजी शब्द "Religion" वस्तुतः "Rel" व "igion" से मिलकर बना है जिसका अर्थ होता है कुछ ऐसे संस्कार या कार्य करना जिनसे मनुष्य और आलौकिक शक्ति से बंध जाये ।"63

इसी प्रकार धर्म के विषय में डा० राधा कृष्ण ने कहा है "धर्म के शब्दार्थ ही ये बताते हैं कि इस समाज की व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने वाला और मानव समाज की एकता की जानकारी रखने वाला पहलू होना चाहिये ।"64

भारत एक धर्म पाण देश है और यहाँ विभिन्न धर्म एवं सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं । धर्म मनुष्य को जीना सिखाता है । भारत इतना विशाल देश है जिसमें विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों लोग एक साथ मिलकर रहते हैं । यहाँ पर हमें अनेकता में एकता की भावना दृष्टिगोचर होती है । धर्म मनुष्य में मनुष्यता का अनुभव कराता है । संस्कृत के एक श्लोक के अनुसार - "आहार, निद्रा, भय और मैथुन ये चार वस्तुएं मनुष्य और पशुओं में समान हैं । धर्म ही मानव की विशेषता है । धर्महीन मानव पशुओं जैसा ही है ।"65

इस प्रकार धर्म मानव जाति की अनिवार्य विशेषता है । मनुष्य को मनुष्य बनाने का काम धर्म ही करता है । धर्म के अभाव में मनुष्य पशु समान है । धर्म के कारण ही मनुष्य स्वयं को सुरक्षित अनुभव करता है । मनुस्मृति के अनुसार - "जो मनुष्य धर्म की रक्षा करता है, उस मनुष्य की रक्षा धर्म करता है ।"66

धर्म और समाज का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है । धर्म है तो मानव जाति है और मानव जाति है तो समाज है अर्थात धर्म के अभाव में मनुष्य और मनुष्य के अभाव में समाज अधूरा है । धर्म समाज को शक्तिशाली और प्रगतिशील बनाता है । इसलिये धर्म के अभाव में समाज और समाज के अभाव में धर्म का टिके रहना असम्भव है । भारतीय समाज इन्द्रधनुष की भाँति अनेक रंगों में रंगा हुआ है । यहाँ अनेकता में भी एकता दिखाई देती है । धर्मों का इतना सुन्दर मिलन अन्यत्र दुर्लभ है । हमारे भारत देश में धर्मों की विविधता पायी जाती है, जितने धर्म हैं उसके अनुसार उसमें समाज की विविधता भी दृष्टिगोचर होती है ।

प्रत्येक मनुष्य की धर्म के प्रति गहरी आस्था होती है और यह आस्था मनुष्य के अस्तित्व से सम्बन्धित है । मनुष्य के आचार-विचार, सामाजिक किया-कलाप, मान्यातऐं आदि परम्परागत रूप से धर्म से जुडे हुए हैं । मनुष्य पैदा होने से लेकर युवावस्था, युवावस्था से गृहस्थ जीवन, गृहस्थ जीवन से बुढ़ापा एवं बुढ़ापे से लेकर मृत्यु तक धर्म से जुड़ा हुआ है । कहने का तात्पर्य यह है कि धर्म किसी भी अवस्था में मनुष्य से पृथक नहीं है ।

भारतीय समाज ईश्वर की परमसत्ता में विश्वास रखता है । यहाँ अनेक देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना बड़ी ही श्रद्धा के साथ की जाती है । भारतीय समाज

अनेक धार्मिक आस्थाओं, विश्वासों एवं मान्यताओं की धरोहर है । यहाँ धर्म का प्रभाव प्रबल शक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होता है जिसके आधार पर मानव-जीवन कार्यान्वित है । यहाँ अनेक किया-कलाप, तीज-त्यौहार धार्मिक पद्धति के अनुसार मनाये जाते हैं । अतः इन त्यौहारों में ईश्वर की ही आराधना है ।

भारतीय समाज का मनुष्य अपनी दिनचर्या में धार्मिक रूप से जुड़ा रहता है । उसके सारे काय धर्म के आधार पर सम्पन्न होते हैं । सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक मनुष्य धर्म से जुड़ा रहता है । शिशु का जन्म होने के बाद उसका नामकरण तथा शादी-ब्याह आदि भी धार्मिक तिथि के अनुसार ही किये जाते हैं । धार्मिक दृष्टिकोण से भारतीय समाज में हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, पारसी आदि अनेक धर्मों के लोग निवास करते हैं ।

हिन्दू धर्म प्राचीनतम धर्म माना जाता है । यह धर्म मूर्ति-पूजा, तीर्थ-यात्रा तथा गंगा स्नान आदि में विश्वास रखता है । किन्तु हिन्दू धर्म में कोई एक धार्मिक ग्रन्थ नहीं मिलता । यहाँ समयानुसार अनेक धार्मिक ग्रन्थों के दर्शन होते हैं । यथाः ऋग्वेद जो प्राचीनतम ग्रन्थ है । यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्वेद । इसके अतिरिक्त महाभारत एवं रामायण के भी दर्शन होते हैं । भगवद गीता हिन्दू धर्म का महान ग्रन्थ है ।

धर्म से सम्बन्धित सारे किया-कलाप हिन्दू समाज में सूर्योदय के साथ ही आरम्भ हो जाते हैं । प्रातःकाल घर में रखे देवता की पूजा-अर्चना करना, धूप बत्ती दिखाना तथा फूलों की माला अर्पित करना आदि कार्य किये जाते हैं ।

हिन्दू समाज में तीर्थ-यात्रा की भी अनिवार्यता है । भारत देश में तीर्थ स्थलों की भरमार है । हरिद्वार, जगन्नाथ पुरी, वृन्दावन, वाराणसी इत्यादि । यह समाज निष्ठापूर्वक इन पवित्र स्थलों की यात्रा कर आत्मा को सन्तुष्ट करता है । इस समाज में गंगा स्नान का भी अत्यधिक महत्व है । यहाँ धार्मिक रूप से निर्धारित दिन पर स्नान किया जाता है ।

हिन्दू समाज में अनेकों पर्व मनाये जाते हैं ; यथाः होली, दीवाली, दशहरा, जन्माष्टमी, गणपति, शिवरात्रि आदि । इन सभी पर्वों के मनाये जाने में धार्मिक

मान्यता अथवा कारण हैं । यह सभी त्यौहार सम्पूर्ण हिन्दू समाज बड़े ही उत्साह पूर्वक मनाता है । इस समाज में अनेक देवी-देवताओं, पेड़-पौधों, वानरों, सांप आदि की पूजा की जाती है । हिन्दू समाज की महिलाएं पीपल, बरगद आदि वृक्ष में धागा बाँध कर मन्नतें लेती हैं । यहाँ उनकी धर्म के प्रति अटूट श्रृद्धा दिखायी देती है । धार्मिक तिथिनुसार उपवास-व्रत आदि भी रखती है । हिन्दू समाज में विवाह करना अर्थात धर्म का अनुसरण करना माना गया है । इस समाज में धर्म से सम्बन्धित अनेक किया-कलाप धर्म के आधार पर किये जाते हैं । विवाह को हिन्दू समाज में धार्मिक कर्तव्य माना गया है । कपाड़िया का कथन है - "जब हिन्दू विद्वानों ने धर्म को विवाह का पहला तथा सर्वोच्च लक्ष्य माना व दूसरा सन्तानोत्तपत्ति को दिया तो स्वाभाविक है कि विवाह पर धर्म का अधिकार हो जाता है ।"67

हिन्दू समाज में ज्योतिष, पण्डित, पुरोहित आदि का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है । किसी भी शुभ कार्य को करने से पूर्व पण्डित आदि से पूछ लेना आवश्यक समझा जाता है । विवाह करने के पूर्व कुण्डलियों का मिलाप भी आवश्यक माना गया है । यह समाज गण्डा, ताबीज़, अंगूठी आदि में भी विश्वास रखता है । विवाह के पूर्व अनेक धार्मिक किया-कलाप अनिवार्य है । उसी प्रकार मृत्यु के पश्चात भी दाह संस्कार, तेरहवीं आदि भी धार्मिक रूप से सम्पन्न किये जाते हैं । परिवार में किसी भी सदस्य की मृत्यु होने पर उसके घनिष्ठ सम्बन्धियों को अपने सिरों का मुण्डन करवाना पड़ता है । उसी प्रकार स्त्री के विधवा होने पर वह आभूषण पहनना तथा सिन्दूर आदि लगाना बंद कर देती है । यह सारे किया-कलाप धर्म के अन्तर्गत आते हैं ।

भारतीय समाज पर इस्लाम धर्म का प्रभाव व्यापक रूप में दृष्टिगोचर होता है । इस्लाम धर्म के पैगम्बर हज़रत मुहम्मद स० अ० थे । जिनका जन्म 570 ई० में मक्का में हुआ था । इस्लाम धर्म का प्रचार हज़रत मुहम्मद ने किया । मुस्लिम समाज धर्मानुसार अपने मूल ग्रन्थ 'कुरान', हदीस एवं सुन्नतों का अनुसरण करता है । सम्पूर्ण मुस्लिम समाज को पाँच धार्मिक कृत्य करना अनिवार्य है - कलमा, नमाज़, रोज़ा, ज़कात एवं हज । इस्लाम धर्म में मूर्ति पूजा का खण्डन किया गया है । यह धर्म एकेश्वरवाद का अनुसरण करता है । अर्थात

ईश्वर एक है, उसके अतिरिक्त किसी और की पूजा करना पाप माना गया है तथा मूल ग्रन्थ कुरान के अनुसार उसकी हत्या कर देने का आदेश है ।

मुस्लिम समाज की अपने धर्म के प्रति अटूट श्रृद्धा है । यह समाज दिनचर्या का आरम्भ ईश्वर स्मरण के साथ करता है । इस समाज में प्रत्येक मुसलमान को प्रतिदिन पाँच बार नमाज़ पढ़ना अनिवार्य है अर्थात पश्चिम में मक्का की ओर मुख करके प्रार्थना करना । सूर्योदय के पूर्व से लेकर सूयास्त के पश्चात तक नमाज़ों का समय निश्चित किया गया है जिसके अनुसार पुरुष मस्जिद में जाकर और स्त्री घर पर ही नमाज़ पढ़ती है । स्त्रियों का मस्जिद में प्रवेश निषेध है ।

कलमा इस्लाम धर्म का मूलमन्त्र है -"ला इलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह" जिसका अर्थ होता ह अल्लाह के सिवा कोई पूजनीय नहीं है तथा मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं ।"68

हज़रत मुहम्मद ने ईश्वर एक है इस बात पर सबसे अधिक ज़ोर दिया है । यहाँ तक कि उन्होंने स्वयं को भी इससे पर रखा । "कहावत है कि जब मुहम्मद साहब मरने लगे, उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि जिस खजूर के पेड़ के पास बैठकर मैं धर्मोपदेश किया करता था, पहले तुम उसे काट डालो, नहीं तो लोग उसी की पूजा करने लगे ।"69

मुस्लिम समाज में सूदखोरी, शराब का सेवन, चोरी करना आदि को पाप में सम्मिलित किया गया है । पवित्र ग्रन्थ कुरान में जिन-जिन बातों का विवरण दिया गया है । उसका यह समाज पूर्ण श्रृद्धा के साथ अनुसरण करता है ।

मुस्लिम समाज का मूल ग्रन्थ कुरान केवल धार्मिक बातों से ही अवगत नहीं कराता, अपतु उसमें समाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक गतिविधियों का भी उल्लेख है । "कुरान में केवल वैयक्तिक धर्म की ही बातें नहीं है, प्रत्युत उसमें मनुष्य-मनुष्य के विविध सम्बन्ध, राजनैतिक बर्ताव, न्याय, शासन, सेना-संगठन, विवाह, तलाक़, शान्ति, युद्ध, कर्ज़, सूदखोरी, दान आदि के सम्बन्ध में धार्मिक उपदेश हैं । उदाहरण के लिये इस्लाम सूदखोरी को पाप समझता है और एक साथ पाँच पत्नियों से अधिक रखने की इजाज़त नहीं देता । इसी प्रकार इस्लाम में शराब पीने की कड़ी मनाही की गयी है ।"70

मुस्लिम समाज में शुभ कार्य धार्मिक पद्धति से ही सम्पन्न किये जाते हैं । यह समाज भी गण्डा, तावीज़, दरगाह पर जाना आदि में विश्वास रखता है । औरतों को दरगाह के अन्दर प्रवेश करना मना है वह केवल बाहर से ही प्रार्थना कर सकती है । बच्चे का जन्म होने पर इस समाज के लोग भी मौलाना आदि से पूछकर नामकरण करते हैं । विवाह आदि की तिथि भी धर्मानुसार निश्चित की जाती है । उदाहरण के लिये मुहर्रम का महीना विवाह आदि के लिये शुभ नहीं माना जाता ।

मुस्लिम समाज पुनर्जन्म में विश्वास नहीं रखता । उसका विश्वास है कि वो पहले न कभी जन्मा था न भविष्य में कभी जन्मेगा । इस समाज में अच्छे बुरे कर्म क अनुसार फल की प्राप्ति होती है ऐसा विश्वास है । मुस्लिम समाज स्वर्ग (जन्न्त) तथा नरक (दोजक़) में विश्वास रखता है । जिसके अनुसार सुकर्म करने वाला स्वर्ग तथा दुष्कर्म करने वाला नरक का अधिकारी होगा ।

मुस्लिम समाज में पवित्र ग्रन्थ कुरान का नियमित पाठ करना प्रत्येक के लिये अनिवार्य है । इसलिये इस समाज में सबसे पहले बच्चे को कुरान की शिक्षा दी जाती है । उसी प्रकार जीवन में कम से कम एक बार हज करना (मक्का मदीना जो अरब शहर में स्थित है) अनिवार्य माना गया है ।

प्रत्येक धर्म में त्यौहारों का अपना महत्व है । उसी प्रकार इस्लाम धर्म में भी अनेक त्यौहार मनाये जाते हैं यथा : मुहरम, रमज़ान, ईद, बकरा ईद इत्यादि । यह सारे त्यौहार धार्मिक पद्धति के अनुसार मनाये जाते हैं । रमज़ान का महीना बहुत ही पवित्र महीना माना जाता है । यह तीस रोज़ों का समूह है जिसमें प्रत्येक मुसलमान पूरे महीने सूर्यास्त के पश्चात केवल एक समय ही भोजन करता है । इसी महीने में प्रथम बार कुरान उतरा था । इस महीने में पूरे कुरान की तिलावत अर्थात पूरा कुरान पढ़ना अनिवार्य है ।

रमज़ान का महीना पूरा होते ही ईद मनायी जाती है । ईद इस्लाम धर्म में बहुत ही खुशी का त्यौहार है । उसी प्रकार बकरा ईद का भी बहुत महत्व है । इसम बकरे की कुर्बानी दी जाती है । ईश्वर ने हज़रत इब्राहीम अलैस्सलाम को अपने पुत्र हज़रत इस्माईल अलैस्सलाम को कुर्बान करने का आदेश दिया था । हज़रत इब्राहीम अलैस्सलाम इस

परीक्षा में सफल हुए थे । इस कारण बकरा ईद मनायी जाती है । इस प्रकार प्रत्येक त्यौहार का धार्मिक महत्व है ।

इस्लाम धर्म जातिगत भेद-भाव को नहीं मानता इसलिए सम्पूर्ण मुस्लिम समाज समानता के सिद्धांत पर आधारित है । किन्तु यहाँ फिर भी शिया-सुन्नी सम्प्रदाय दिखायी देते हैं जिसमें शिया सम्प्रदाय स्वयं को प्रधान मानता है । मुहर्रम के समय यह भावना मुख्य रूप से दृष्टिगोचर होती है । विवाह मुस्लिम समाज के पैग़म्बर (PROPHET) की सुन्नत अर्थात आदेश माना गया है । जिसका पालन करना प्रत्येक मुसलमान का कर्तव्य है । विवाह के समय अनेक किया-कलाप धार्मिक पद्धति के अनुसार ही किये जाते हैं । इस समाज में विवाह के स्थायी रूप को महत्व दिया गया है । इस्लाम धर्म के अनुसार विवाह सम्बन्धित जो भी कुरान में आया है उसका प्रत्येक मुसलमान पूर्ण निष्ठा के साथ पालन करता है । इसके अतिरिक्त इस समाज में स्त्री के विधवा होने पर वह चालीस दिन की इद्दत करती है अर्थात वह स्त्री चालीस दिन तक घर से बाहर नहीं निकलती ।

भारतीय समाज सिक्ख धर्म से भी प्रभावित है । सिक्ख धर्म के प्रथम संस्थापक गुरु नानक देव हुए । गुरु नानक मूर्ति पूजा को नहीं मानते थे । वे जन्मजात हिन्दू थे । किन्तु फिर भी उन्होंने मूर्ति पूजा का खण्डन किया है । उन्होंने कर्म पर विशेष बल दिया । इस धर्म का पवित्र ग्रन्थ **आदि ग्रन्थ** है । जिसका पाठ करना धार्मिक कार्य माना जाता है । अमृतसर का स्वर्ण मन्दिर इस धर्म का तीर्थ स्थल है जो पंजाब में स्थित है । सिक्ख धर्म में गुरु नानक से लेकर गुरु गोविन्द तक दस गुरु हुए हैं । परमपरागत रूप से प्रत्येक गुरु ने मृत्यु के समय अपना पद अगले गुरु को सौंपा किन्तु गुरु गोविन्द सिहं के पश्चात कोई व्यक्ति गुरु घोषित नहीं किया गया । "गुरु गोविन्द सिंह जब स्वर्गवासी होने लगे, तब उन्होंने गन्थ को ही पन्थ का गुरु घोषित कर दिया और यह आज्ञा दी कि अब से कोई व्यक्ति गुरु नहीं होगा ।"7।

गुरु गोविन्द सिहं ने 'सिक्ख खालसा' की स्थापना की जिसके अन्तर्गत 'खालसा' के अनुयायी को पाँच शपथ लेनी पड़ती हैं - "अपने सिर और दाढ़ी के बालों को बिना काटे धारण करना (केश), और उन्हें साफ रखने के लिये एक (कंघा) रखना, सैनिकों

के अधोवस्त्र 'कच्छा' धारण करना, अपनी दाहिनी कलाई पर इस्पात का 'कड़ा' पहनना और अपने शरीर पर एक हलका हथियार 'किरपान' धारण करना ।"72

सिक्ख समाज धर्मानुसार सूर्योदय के पूर्व धार्मिक संगीत के साथ कीर्तन करता है । सिक्ख धर्म ईश्वर का नाम जपने में विश्वास रखता है । इस समाज के पूजा स्थल को गुरुद्वारा कहा जाता है । जहाँ जाकर यह समाज सामूहिक रूप में भजन-कीर्तन करता है ।

सिक्ख धर्म पर्दा-प्रथा का विरोध करता है । इस समाज की स्त्री पूर्ण रूप से स्वतंत्र है । खान-पान का भी इस समाज में कोई प्रतिबंध नहीं है । इस समाज में भी अनेकों त्यौहार मनाये जाते हैं यथा : बैसाखी, लौहड़ी, गुरु पूर्णिमा, गुरु नानक जयंती आदि । इन त्यौहारों का सम्पूर्ण सिक्ख समाज आनंद लेता है ।

अन्य धर्मों की भाँति भारतीय समाज पर ईसाई धर्म का प्रभाव भी दिखाई देता है । ईसाई धर्म के प्रवर्तक ईसा मसीह है । इस धर्म के अनुसार उनका ईश्वर व्यक्तित्वपूर्ण है । यह समाज ईसा मसीह में विश्वास करता है तथा उन्हें ईश्वर का पुत्र मानता है । "यहाँ ईश्वर और मानव के बीच पिता-पुत्र का सम्बन्ध है । जिस प्रकार पिता सदैव अपनी सन्तानों के कल्याण का ध्यान रखता है, उसी प्रकार ईश्वर भी प्राणियों के प्रति सदैव स्नेहमय एवं कल्याणशील रहता है ।"73

ईसाई धर्म एकेश्वरवाद का अनुसरण करता है । यह धर्म मूर्ति पूजा का विरोधी है । इस धर्म का पवित्र ग्रन्थ बाइबिल है । यह धर्म अपने ईश्वर को अत्यन्त दयालु तथा सभी पर कृपा करने वाला मानता है । इस समाज के सभी धार्मिक कार्य गिरिजाघरों में ही सम्पन्न किये जाते है । यहाँ मोमबत्ती जलाकर प्रार्थना की जाती है । यह समाज जातिगत भेद-भाव को नहीं मानता, इस दृष्टिकोण से गिरिजाघरों में सभी को प्रवेश करने की आज्ञा है । इस धर्म के प्रमुख त्यौहार ईस्टर, किसमस एवं गुड फ्राइडे है जिसे यह सम्पूर्ण ईसाई समाज मिलकर मनाता है ।

धार्मिक दृष्टिकोण से भारतीय समाज पर पारसी समाज का भी प्रभाव दिखायी देता है । पारसी समाज के प्रवर्तक जराथुस्त्र थे । इन्हें ज़ोरास्टर ZORASTER

भी कहा जाता है । ज़ोरास्टर ने जिस धर्म की स्थापना की उसे पारसी धर्म कहा जाता है । पारसी धर्म की उत्पत्ति ईरान में हुई । किन्तु अब ईरान से अधिक इनकी संख्या भारत में है ।

पारसी समाज का मूल धर्म ग्रन्थ अवेस्टा AVESTA है । यह ज़ेन्द भाषा में लिखा हुआ है । सम्पूर्ण पारसी समाज अपने मूल ग्रन्थ अवेस्टा का अनुसरण करता है । यह पारसी समाज अपने रीति-रिवाजों के साथ-साथ भारतीय जीवन का भी अंग बन गया । यह समाज अपने धर्मानुसार अग्नि, पृथ्वी तथा पानी को पवित्र मानता है इसी कारण किसी व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात उसका शव न तो गाड़ते हैं न ही जलाते हैं, उस शव को यह समाज किसी ऊँचे टीले अथवा टावर आदि पर रख देते हैं जिसे गिद्ध आदि खा जाते हैं । पारसी समाज अपने ईश्वर को अहुरामज़दा कहता है जिसने इस विश्व की रचना की है तथा जो बहुत ही दयालु तथा न्याय करने वाला है ।

पारसी समाज में अग्नि का अत्यधिक महत्व है अतः इनके मन्दिर में सदैव एक दीपक प्रकाशित रहता है । इनके मन्दिर को अगियारी अर्थात अग्नि मन्दिर कहा जाता है ।

पारसी तथा हिन्दू धर्म में समानता दिखायी देती है । अनेक रीति-रिवाजों को पारसी ने हिन्दू समाज से ग्रहण किया है । गुजराती को इन्होंने अपनी भाषा बनाया । पारसी समाज के तीज-त्यौहार भी हिन्दू समाज के धर्मानुसार ही होते हैं । पतेती इस समाज का नया साल के रूप में मनाया जाने वाला त्यौहार है ।

पारसी समाज को भी अच्छी एवं बुरी शक्ति में विश्वास है, जिसमें अहुरामज़दा शुभ देव हैं तथा अहरिमन अशुभ देव अर्थात असुर की भाँति है । इन दोनों में परस्पर युद्ध चलता रहता है तथा जैसे कि प्रत्येक धर्म में विजय सदैव अच्छी शक्ति की होती है । उसी प्रकार इस धर्म का भी अटूट विश्वास है कि विजय अहुरामज़दा की होगी । पारसी धर्म के प्रवर्तक जोरास्टर के अनुसार सभी देव एक ही ईश्वर की अभिव्यक्तियाँ बताया है । इस दृष्टिकोण से पारसी समाज एकेश्वरवाद का अनुसरण करता है ऐसा कहा जा सकता है ।

निष्कर्षतः भारतीय समाज अनेक समाजों की धरोहर है । यहाँ अनेक समाजों की विविधता परिलक्षित होती है । इन विभिन्न समाजों की अपनी देवी-देवताओं

के प्रति अटूट श्रद्धा है । अतः प्रत्येक समाज का मनुष्य अज्ञात शक्ति के रूप में धर्म से जुड़ा हुआ है ।

भारतीय समाज पर संस्कृति का प्रभाव :-

"'संस्कृति'शब्द का पारिभाषिक अर्थ है -जिसका संस्कार किया गया हो, परिमार्जित, परिष्कृत । संस्कृति सभ्यता का ही दूसरा अंग है, परन्तु जहाँ सभ्यता प्रमुख रूप से आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक उपलब्धियों स सम्बद्ध है, संस्कृति का सम्बंध आध्यात्मिक, बौद्धिक एवं मानसिक उपलब्धियों से है । संस्कृति का सम्बन्ध परम्परागत विचारों से है ।"74

मनुष्य जन्म पर्यन्त गुण सम्पन्न नहीं होता है । वह आचार-विचार, सभ्यता-संस्कृति समाज में आकर सीखता है । सर्व प्रथम प्रभाव उस पर पारिवारिक संस्कृति का होता है । परिवार किस प्रकार की संस्कृति से प्रभावित है ? वह शिक्षित है या अशिक्षित । पैतृक वंश उसका किस प्रकार का था ? इसके आधार पर मनुष्य में गुणों अथवा दोषों का विकास होता है । शिक्षित परिवार ही शिक्षित समाज बनाता है और शिक्षित समाज ही अच्छे विचारों के द्वारा सभ्यता और संस्कृति को विकसित कर पाता है । केवल शारीरिक वृद्धि ही विकास या गति नहीं कहलाती इससे भी बढकर है उसमें संस्कृति का विकास होना । वह किस प्रकार की संस्कृति से प्रभावित हो रहा है ? के० आर० श्यामला अपने संदर्भ गंन्थ में लिखती हैं - "संस्कृति शब्द का अर्थ भी संशोधित हुई, परिष्कृत हुई समुन्नत हुई मानसिक अवस्था से है । मानव जब केवल आहार, विहार आदि शारीरिक व्यापारों से उठकर क्रिया-कलाप में रूचि धारण करता है, तभी वह संस्कृत है ।"75

इसके अतिरिक्त संस्कृति के सम्बन्ध में बाबू गुलाब राय एवं श्री गुरु दत्त संस्कृति शब्द का संस्कारों से सम्बन्ध स्थापित करते हुए कहते हैं -"संस्कृति शब्द का सम्बन्ध संस्कार से है जिसका अर्थ है संशोधन करना, उत्तम बनाना, परिष्कार करना । अंग्रेजी शब्द 'कल्चर' में वही धातु है जो एग्रीकल्चर में है । इसका भी अर्थ पैदा करना या सुधारना है

। संस्कार व्यक्ति क भी होते हैं और जाति के भी । जातीय संस्कृति को ही संस्कार कहते हैं । श्री गुरु दत्त संस्कारों से उत्पन्न व्यवहार को ही संस्कृति कहते हैं ।"76

किसी भी समाज की संस्कृति का प्रभावित होना या प्रभावित करना स्वाभाविक है । भारतीय समाज पर भी अन्य संस्कृति का पभाव पडता रहा है । परिवर्तित स्थितियों के अनुसार भारतीय समाज पर अन्य संस्कृति का प्रभाव पडा है । भारतीय समाज की संस्कृति अत्यंत प्राचीन है और इसलिये भारतीय समाज पर वैदिक संस्कृति का प्रभाव रहा है । यदि हम जानें कि वैदिक युग में भारतीय समाज की संस्कृति किस प्रकार की थी तो हम जानेंगे कि उस समय भारतीय समाज स्वच्छंद था अपनी इच्छानुसार जीवन व्यतीत करता था । नारी की स्थिति काफी सुदृण थी और स्त्रीजाति का उच्च स्थान था ।

वैदिक काल में नारी को शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अधिकार था तथा वह अपने पति के साथ काम पर भी जाया करती थी । उस काल में संतान को पिता का नाम न देकर माता का नाम दिया जाता था अतः हम कह सकते हैं कि वह नारी प्रधान समाज था । इस प्रकार उस समय का भारतीय समाज सभ्यता-संस्कृति से परिष्कृत था और वैदिक संस्कृति से प्रभावित था ।

समय परिवर्तित हुआ मुस्लिम शासन की स्थापना हुई मुस्लिम शासकों की संस्कृति का सीधा प्रभाव हम भारतीय समाज पर देखते हैं । जिसने नारी को चार दीवारी में कैद कर दिया । जहाँ केवल मस्लिम समाज ही नहीं अपितु हिन्दु समाज भी उस संस्कृति से प्रभावित हुए बिना न रहा । पर्दा प्रथा का प्रभाव भारतीय समाज पर पडा । इसके अतिरिक्त केवल पुरुष को ही काम पर जाने का अधिकार प्राप्त हुआ और नारी की स्थिति दयनीय हो गयी । वैदिक काल में जहाँ नारी को आदर की दृष्टि से देखा जाता था वहीं वह दया की पात्र बन गयी । उसे तमाम अधिकारों से वंचित कर शारीरिक एवं आर्थिक रुप से पुरुष पर निर्भर होने के लिये बाध्य कर दिया गया ।

भारतीय समाज ने सदा दूसरी अन्य संस्कृति को स्वीकार करने में कभी हिचकिचाहट नहीं दिखाई । संस्कृति के विषय में भारतीय समाज सदैव सुदृढ रहा है । भारतीय समाज संस्कृति का भंडार है इस समाज ने प्रत्येक संस्कृति को गले से लगाया है ।

यदि भारतीय समाज को वेश-भूषा की दृष्टि से देखें तो हिन्दू समाज में साडी और मुस्लिम समाज में शलवार कुरता पहनने की परंपरा रही है किन्तु इन दोनों ही समाज पर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव देखा जाता है जहाँ साडी और शलवार कुरते का स्थान अब जींस शर्ट, टी शर्ट आदि ने लिया है । जिसको यह समाज फैशन का नाम देकर इस संस्कृति को स्वीकार करता है ।

उसी प्रकार से हिन्दू समाज पर मुस्लिम एवं मुस्लिम समाज पर हिन्दू संस्कृति का प्रभाव भी दिखाई देता है । जहाँ हिन्दू समाज में नारी विवाह के पश्चात शलवार कुरता नहीं पहन सकती थी उसे केवल साडी पहनने की आज्ञा थी किन्तु अब ऐसा कोई बन्धन नहीं है । उसी प्रकार मुस्लिम समाज में भी स्त्री साडी आदि पहनना फैशन मानती हैं ।

आधुनिक युग की पीढी समय के साथ चलना पसन्द करती है इसलिये यह पीढी अपने आचार-विचार तथा व्यवहार में पूर्ण रूप से परिवर्तित हो उसी संस्कृति में स्वयं को ढाल लेती है । आज की पीढी नमस्ते अथवा सलाम के स्थान पर हाय, हैल्लो कहना अधिक पसन्द करती है क्योंकि युवा पीढी अन्य संस्कृति से अति शीघ्र प्रभावित हो जाती है उसे अपनी संस्कृति प्राचीन नजर आती है जिसको वह बदल देना ही अच्छा समझती है । इसलिये पारम्परिक रूप से चली आ रही संस्कृति को वह त्याग देती है । "विशेषतः आज के युग में सांस्कृतिक तत्व में रहन सहन एवं फैशन की संस्कृति में पूर्ण परिवर्तन दृष्टिगत होता है । नयी पीढी की दृष्टि से पुरानी जीवन पद्धति उनके लायक नहीं है, इसलिये समाज की सडी-गली परंपराओं को तोड रही है ।"77

भारतीय समाज में शादी-ब्याह आदि प्राचीन रीति-रिवाजों के अनुसार होते रहे हैं । परम्परानुसार अनेक साँस्कृतिक प्रसंगों का होना अनिवार्य रहा है । किन्तु आधुनिक भारतीय समाज पश्चिमी संस्कृति से इतना प्रभावित हुआ है कि साँस्कृतिक गीतों आदि के स्थान पर अब डी० जे० आ गये हैं जहाँ अंग्रेजी गीतों पर नृत्य कर स्वयं को संतुष्ट करते हैं । एक समय था जब विवाह आदि में भोजन भूमि पर दिया जाता था फिर मेज कुर्सी ने यह स्थान प्राप्त किया और अब पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित यह समाज खडे रहकर स्टैंडिंग में भोजन करना शान समझता है ।

निष्कर्षतः संस्कृति समाज को नये आयामों की ओर अग्रसर करती हुई अपना स्वरूप विकसित करती है किन्तु आन्तरिक रूप से वह अपनी परम्पराओं की जड मजबूत रखती है । इसलिये कोई भी संस्कृति का भारतीय समाज पर कितना भी प्रभाव क्यों न पडे किन्तु वह अपनी जड़ों को हिलने नहीं देती ।

भारतीय सामाजिक परिवेश एवं स्वातंत्र्योत्तर समाज का बदलता स्वरूप :-

स्वातंत्र्योत्तर भारतीत समाज की स्थिति जानने से पूर्व हमें यह जानने की आवश्यकता है कि स्वतन्त्रता पूर्व भारतीय समाज की आर्थिक स्थिति कैसी थी ? और वह किन-किन परिस्थितियों का सामना कर रहा था ? यह हमारा बहुत बडा दुर्भाग्य था कि हम पर कई विदेशी जातियों ने आक्रमण किये और हम पर राज किया । जैसा कि हम जानते हैं कि पहले हमारा देश सोने की चिडिया माना जाता था और इसी कारण विदेशी जातियाँ हमारी धन-सम्पदा, वैभव आदि से आकर्षित हुई तथा उन पर अपना अधिकार स्थापित करने के भरसक प्रयत्न किये । अंग्रेजों ने भारत में व्यापार करने के बहाने अपना साम्राज्य स्थापित किया । दिन-प्रतिदिन भारत की आर्थिक स्थिति बिगडती गयी । अंग्रेजी शासन का मुख्य उददेश्य ही भारत से अत्यधिक लाभ उठाना था और आर्थिक स्थिति को क्षति पहुँचाना था । अंग्रेज भली-भाँति जानते थे कि भारतवर्ष ही एक ऐसा देश है जहाँ शिल्पकारों, कलाकारों इत्यादि की भरमार है । भारत देश हस्तकला के लिये सुप्रसिद्ध रहा है ।

इन सभी बातों को दृष्टि में रखते हुए अंग्रेजों ने भारत के लोगों को बहका कर अपनी कूटनीति में सम्मिलित करने के प्रयत्न शुरु किये । "भारत का हस्त शिल्प सदियों से विश्व प्रसिद्ध रहा था ब्रिटिश काल में इनकी अवनति हुई और फिर धीरे-धीरे समाप्ति हो गई क्योंकि कलाकारों को प्रोत्साहन देने वाले भारतीय राजा-महाराजाओं की सत्ता छिन गयी तथा इंग्लैंड के मशीन निर्मित लोगों की रुचि बढा । भारतीय लोगों की प्रतिव्यक्ति आय बहुत

कम हो जाने के कारण उनका जीवन भूख, गरीबी और गन्दगी में अभाव ग्रस्त जैसा बीतने लगा । सोने की चिडिया कहा जाने वाला भारत गरीब देशों की श्रेणी में आ गया ।"78

अंग्रेजों के घोर अत्याचार और शोषण के कारण भारत के उद्योग-धंधे, व्यापार आदि पर अत्यधिक प्रभाव पडा । कृषकों से उनकी जमींने हडप लीं और उनसे उन्हीं की जमींनों पर मजदूरी करवायी । देश में जो बड-बड ज़मींदार, ठेकेदार और मिल मालिक थे उनको अनेक प्रकार के लालच देकर अपनी नीति में शामिल कर लिया । अंग्रेजों ने मजदूरों पर अत्याचार करना आरम्भ कर दिये । कम मजदूरी देकर अधिक से अधिक काम करवाये । इन मजदूरों के लिये अवकाश की कोई सुविधा नहीं थी रविवार को भी नहीं । इस प्रकार ब्रिटिश शासन अपनी कूटनीति के द्वारा भारत को उन्नति से अवनति की ओर ले जाने में सफल हुए ।

भारत वर्ष पर अंग्रेजों के शासन के कई कारण थे एक तो अंग्रेज़ों को भारत से व्यापारिक लाभ होता था और दूसरा भारत कच्चा माल उत्पादन का एक बहुत बडा क्षेत्र था । चाय, काफी, कपास आदि इंग्लैंड निर्यात किया जाने लगा । इन सभी परिस्थितियों के कारण भारत की आर्थिक स्थिति बिगडती गयी । भारत देश निरन्तर ऋणग्रस्त होता जा रहा था और अंग्रेज उन्नति की ओर अग्रसर होते गये । अंग्रेज भारत की सम्पत्ति लूटने में सफल हुए । भारत देश आर्थिक रूप से अंग्रेजों के हाथ में चला गया ।

शताब्दियों तक भारत में अंग्रेज़ों का शासन रहा । समय-समय पर अपने देश के हित में देशभक्तों ने इस दासत्व से मुक्ति पाने के प्रयास किये किन्तु सफलता नहीं मिली ।

इस प्रकार हम दखते हैं कि स्वतंत्रता पूर्व भारत अनेक रूप में आर्थिक समस्याओं से ग्रस्त था । इन्हीं परिस्थितियों के मध्य गांधी जी का उदय हुआ जिस प्रकार अंधेरे के बाद सूर्य की एक किरण पूरे जग को प्रकाशित करती है उसी प्रकार गांधी जी उस समय आशा की किरण बनकर आये । गांधी जी ने भारत वर्ष को स्वतन्त्र कराने में बडो-बडो कुरबानियां दीं । गांधी जी ने आम जनता को देश के प्रति जागरुक किया, हिंसा को समाप्त करने के लिये "सत्य-अहिंसा" आन्दोलन चलाया । उन्होंने अपने देश को अंग्रेजों के चंगुल से छुडाने की

कोई कसर नहीं छोडा तथा अन्य देशभक्त भी गांधी जी के साथ हो लिये । इसके फलस्वरुप अंग्रेज़ों को अपना शासन खतरे में नजर आने लगा अतः दो शतकों से परतंत्रता की जंजीरों जकडा हुआ भारत वर्ष आजादी की खुली सांस लेने की आशा करने लगा । गांधी जी ने अंग्रेजों को नाकों चने चबा दिये और अंततः अंग्रेजों को विवश होकर सत्य के आगे झकना पडा ।

15 अगस्त सन 1947 को भारत देश स्वतंत्र हुआ । यही वह दिन था जब भारतीयों को स्वतंत्रता पूर्वक जीने का अधिकार प्राप्त हुआ और दासत्वता से मुक्ति मिली । भारत देश को स्वतंत्र कराने में देश के अनेक देशभक्तों ने अपने प्राणों की आहुति दी तथा अनेक आंदोलन हुए । इन देशभक्तों के नाम सदैव भारत के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखे रहेंगे । समय कभी एक समान नहीं रहता स्वतंत्रता पूर्व हमारा देश कुछ और था उस समय आर्थिक स्थिति काफी दयनीय थी किन्तु स्वातंत्र्योत्तर भारत में आर्थिक रुप से परिवर्तन हुए । किन्तु दुःख इस बात का ह कि आजादी तो मिली पर दो टुकडों में हिन्दुस्तान और पाकिस्तान ।

स्वतंत्रता पूर्व भारतीय समाज आर्थिक स्थिति के अतिरिक्त अनेक बाह्याडम्बरों एवं अंधविश्वासों से जकडा हुआ था । उस समय भारत की सामाजिक स्थिति अत्यन्त दयनीय और कष्टकर थी । समाज अनेक कुपथाओं और कुरीतियों का सामना कर रहा था । सम्पूर्ण भारतीय समाज छुआछूत, ऊँच-नीच, धार्मिक अंधविश्वास तथा पारम्परिक रुढियों से प्रदूषित था । साम्प्रदायिकता की भावना भी लोगों के दिलों में भयंकर रूप धारण कर चुकी थी । भारतीय जनजीवन सामाजिक बुराइयों से ग्रस्त हो चुका था । यथा - "समाज में अंधविश्वास एवं रुढिवादिता की भावना प्रबल होती गयी । भोगवादी मुगलों की लोलुप दृष्टि के कारण समाज में नारी की स्थिति दयनीय होती गयी "यत्र नार्यन्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" वाला आदर्श समाप्त हो गया शिक्षा और अधिकार से वंचित नारी मात्र भोग्या बनकर घर की चार दीवारी में कैद हो गयी । परिणाम स्वरुप दूधपीती, बाल-विवाह, दहेज-प्रथा, अनमेल विवाह, परदा प्रथा, बहुपत्नीव, विधवाओं की दयनीय स्थिति, धर्मांधता, साम्प्रदायिकता, ऊँच-नीच, छुआछूत इत्यादि अनेक जर्जरित परम्पराओं एवं दूषणों से भारतीय समाज अस्त-व्यस्त हो गया था ।"79

यदि हम बात करें परिवर्तन की तो आदियुग से लेकर आज तक प्रत्येक समाज में किसी न किसी रूप में परिवर्तन होते ही रहे हैं और भारतीय समाज सुधारक सामाजिक कुप्रथाओं तथा कुरीतियों के विरोध में संघर्ष करते रहे हैं । जिस समय गांधी जी का आविर्भाव हुआ उस समय भारतीय समाज में छुआछूत की भावना पूर्ण रूप से पनप चुकी थी । छुआछूत की कडवाहट की भावना लोगों में भयंकर रूप धारण कर चुकी थी । धार्मिक स्थलों मन्दिर एवं मस्जिद में नीची जाति के लोगों का प्रवेश निषेध था इसी वातावरण में गांधी जी ने पदार्पण किये ।

गांधी जी ने छुआछूत की भावना समाप्त करने के लिये "अछूतोद्धार आंदोलन" चलाया । "अहिंसा, सत्य एवं शान्ति के महात्मा ने अछूतोद्धार को अपनी आदर्श विचार धारा, सिद्धांत एवं चिंतन में सम्मिलित करते हुए असपृश्यता को नयी संज्ञा से विभूषित किया है कि "यह घृणाभाव को उत्पन्न करती है ।" अछूत तथा निकृष्ट जातियों को एक नये नाम से "हरिजन" से विभूषित कर सवर्ण समाज के निकट लाने का प्रयास किया । हरिजनों को धार्मिक एवं सार्वजनिक स्थलों में प्रवेश तथा शैक्षणिक सुविधाओं के लिये विशिष्ट बल दिया ।"80

इस प्रकार गांधी जी ने जो अछूत एवं शूद्र थे तथा जिन्हें समाज में भंगी, चमार आदि नामों से पुकारा जाता था । उन्हें 'हरिजन' की संज्ञा दी और इस प्रकार के मतभेद को लगभग समाप्त किया ।

स्वतंत्रता पूर्व भारतीय समाज में सती प्रथा का प्रचलन था । उस समय पति की मृत्यु के पश्चात स्त्रियाँ सती हो जाती थीं यदि कोई स्त्री सती नहीं भी होना चाहती थी तो उसे सती होने के लिये बाध्य किया जाता था और अपनी इच्छा से सती होना शुभ माना जाता था । उस समय राजा राम मोहम राय जैसे महान समाज-सुधारक ने "ब्रह्म-समाज" की स्थापना की और इस संस्था के माध्यम से समाज में प्रचलित बुराइयों के विरुद्ध कदम उठाए । उन्होंने सती प्रथा का विरोध किया और इसके विरुद्ध कानून पारित किया ।

राजा राम मोहन राय स्त्रियों की दयनीय स्थिति से बहुत दुःखी थे - "राजा राम मोहन राय जब युवावस्था में थे, अपनी भाभी को पति की चिता पर जलने के

लिये विवश किये जाते हुए देखकर दंग रह गये थे । वे कोलकाता के शमशान घाट पर जाते और विधवाओं को यह समझाने की कोशिश करते कि वे सती न हो । उन्होंने तर्क दिया कि यह एक बुरी प्रथा है, जिसे एकदम रोकने की बजाय बिल्कुल त्याग देना चाहिये ।"8।

राजा राम मोहन राय ने कवल सती-प्रथा ही नहीं, उन्होंने स्त्रियों से जुडा अनेक कुरीतियों एवं कुप्रथाओं को समाप्त किया। स्वतंत्रता पूर्व भारतीय समाज में नारी शिक्षा से वंचित थी। उन्हें शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था इसके अतिरिक्त राजा राम मोहन राय ने पर्दा-प्रथा का विरोध किया। वे पुनर्विवाह के पक्ष में थे । समाज में व्याप्त इन तमाम कुरीतियों से राजा राम मोहन राय अत्यंत चिंतित थे । "समाज में व्याप्त इन कुरीतियों, बुराइयों पर राय साहब ने तीव्र प्रहार किये । राजा राम मोहन राय के अविराम प्रयत्नों के फलस्वरूप सन 1817 में लार्ड विलियम बेटिंग ने सती-प्रथा पर रोक लगा दी । जातिप्रथा को समाज विरोधी एवं अमानवीयता की दृष्टि से देखा गया ।"82

एक ओर राजा राम मोहन राय ने सती-प्रथा पर रोक लगायी तो दूसरी ओर गांधी जी ने विधवा विवाह का समर्थन किया । भारतीय हिन्दू समाज में विधवा होना एक अभिशाप माना जाता था । उनके सारे अधिकार छीन लिये जाते थे, उन्हें तीज-त्यौहार या अन्य किसी शुभ अवसर या प्रसंग में सम्मिलित नहीं किया जाता था और केवल श्वेत वस्त्र धारण करने की ही आज्ञा थी ।"विधवा नारी समाज के लिये एक बोझ, परिवार के लिये एक अनुपेक्षित दायित्व और अपने-आप में एक अव्यक्त पीड़ा का साकार रूप है ।"83

इस प्रकार उस समय विधवाओं को भारतीय समाज में लोग हीन दृष्टि से देखा करते थे । जब गांधी जी ने विधवा-विवाह का समर्थन किया तो इन विधवाओं को समाज में प्रतिष्ठा का स्थान मिला और इस अंधविश्वास से कुछ हद तक छुटकारा मिला ।

इन समाज-सुधारकों ने भारतीय समाज की अनेक समस्याओं में सुधार लाने की अहम भूमिका निभाई । आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी अपने निबंध "विधवा-विवाह-मीमांसा" में लिखते हैं - "कोई भी प्रान्त ऐसा नहीं जहाँ अब विधवा-विवाह न होते हों । कटटर कान्यकुब्ज ब्राह्मणों तक में अब इस प्रथा ने प्रवेश कर लिया है ।"84

जब सती-प्रथा पर प्रतिबंध लगा तो सरकार द्वारा जगह-जगह पर विधवा आश्रम खोले गये । सरकार ने इनके लिये आश्रम तो खोल दिये किन्तु इन्हें किसी प्रकार सुख-सुविधा प्राप्त नहीं हुई । वृंदावन की विधवाओं की स्थिति से कौन अवगत नहीं है जो भगवान श्री कृष्ण का जन्म स्थल उत्तर-प्रदेश के मथुरा जिले में स्थित है । सती-प्रथा पर प्रतिबंध लगने पर देश के अनेक स्थानों से आकर विधवा महिलाओं ने यहाँ आश्रय लिया जिसका इतिहास लगभग 3000 शताब्दी पूर्व माना जाता है ।

वृंदावन की विधवाओं की स्थिति से सम्बन्धित वर्तमान में एक महान विभूति "सुलभ-इण्डिया" के प्रधान संपादक डॉ० विन्देश्वर पाठक जी ने अहम की भूमिका निभाई है । पाठक जी वृंदावन का भ्रमण कर वहाँ की स्थिति से अवगत हुए जिससे ज्ञात हुआ कि सामान्य ज़रूरतों से यहाँ की महिलाएँ वंचित रहती हैं । पाठक जी ने इन महिलाओं की तमाम समस्याओं को सुनकर निर्णय लिया कि अब इस आश्रम की प्रत्येक महिला को सुविधाएं उपलब्ध करायी जायेंगी । उस समय सभी महिलाओं की आँखों में आशा की किरण स्पष्ट रूप से देखी जा सकती थी । इससे ज्ञात होता है कि आज भी हमारे देश में श्री विन्देश्वर पाठक जी जैसे लोग हैं जो आज गांधी जी अथवा राजा राम मोहन राय जैसे महान विभूति से कम नहीं ।

स्वतंत्रता पूर्व दहेज-प्रथा भारतीय समाज की एक भयंकर समस्या थी । धन अभाव के कारण माता-पिता अपनी गुणी, सुन्दर और सुशील कन्या को किसी को भी सौंप देते थे । यही वह समय था जब कन्या का पैदा होना पाप माना जाता था और कन्या भ्रूण हत्या जैसे पाप होते थे । कन्या का भविष्य सोचकर ही कन्या के माता-पिता चिंतित हो जाते थे कि अब इनका विवाह कैसे होगा ? हिन्दू समाज में तो कन्या का जन्म एक अभिशाप माना जाता था ।

दहेज के कारण नई-नवेली दुल्हन को जला दिया जाता था । महिलाओं को अनेक प्रकार से प्रताडित किया जाता था । दहेज-प्रथा जैसी भयंकर समस्या अपनी चरम सीमा पर थी । "मध्य तथा पश्चिमी भारत में कन्या का जन्म होते ही उसे अफीम देकर या उसे अन्य उपायों से मार दिया जाता था ।"85

दहेज-प्रथा का प्रचलन प्रत्येक समाज में रहा फिर चाहे वह हिन्दू समाज हो या मुस्लिम समाज । दहेज-प्रथा क्या थी एक प्रकार से कन्या को बचना था । उसी प्रकार से मुस्लिम समाज में महर के नाम पर बेचा और खरीदा जाता था । इस गंभीर समस्या से छुटकारा पाने के लिये कितने जतन किये गये पर कोई परिणाम नहीं निकला दहेज-प्रथा की समस्या वहीं की वहीं थी । फिर एक समय आया जब बाल गंगाधर तिलक और गोपाल गणेश आगकर जैसे समाज सुधारकों ने अपने कदम बढाये और इनके साथ ही अनेक साहित्यकारों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज को दहेज-प्रथा के विरुद्ध खडा कर उसे जागृत करने में सफल हुए ।

यह कहना गलत न होगा कि दहेज-प्रथा ही कन्या भ्रूण-हत्या, अनमेल-विवाह और वैश्या समस्या की उपज है । दहेज के कारण कन्याएं अपने माता-पिता को कर्ज के बोझ तले दबा हुआ नहीं देख सकतीं और इसके फलस्वरुप वे गलत पथ का अनुसरण कर लेतीं हैं । अपने परिवार की आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण अपना मान-सम्मान और संस्कारों का गला दबाकर, विवश होकर वैश्या का जीवन जीने पर मजबूर होती हैं । "सामाजिक अत्याचारों, कुवासनाओं के फलस्वरुप नारियों को विवश होकर वैश्या बन जाना पडा । उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द वैश्या-समस्या का मूल समाज में नहीं वरन व्यक्ति में देखते हैं । इन संस्कारों को बढावा देने का कार्य समाज की आर्थिक व्यवस्था करती ह ।"86

किन्तु इन सारी समस्याओं की उपज कहीं न कही शिक्षा की कमी रही है । नारी पर पुरुष का अत्याचार, दहेज-प्रथा, पर्दा प्रथा, विधवा-विवाह, वैश्या-समस्या, अंधविश्वास, जातिवाद की समस्या आदि । नारी का उत्थान-पतन किसी भी समाज को प्रभावित करती है ।

भारतीय समाज में स्त्री शिक्षा का प्रबल विरोध था । महात्मा फुले और दयानन्द सरस्वती ने नारी शिक्षा पर बल दिया । महात्मा फुले का मानना था - "जब तक स्त्री शिक्षित नहीं हो जाती, तब तक समाज सच्चे अर्थों में शिक्षित नहीं हो सकता । एक शिक्षित माता जो सुसंस्कार अपने बच्चों में डाल सकती है, उन्हें हजार अध्यापक या गुरु नही डाल सकते । यदि राष्ट्र की आधी शक्ति के रूप में स्थित नारी-समाज को नारी शिक्षा के

महत्व को समझाने का प्रयास किया जिसके लिये अनेक कष्ट, उपेक्षा सही एवं सतत लगन व त्याग से अपने काम को आगे बढाया । उनका मानना था कि नारी-समाज शिक्षित हो, तभी हमारा राष्ट्र प्रगति कर सकता है । शिक्षा की प्राथमिक पाठशाला बच्चे का परिवार है । अतः घर की स्त्रियों को शिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है ।"87

स्वतांत्र्योत्तर भारतीय समाज में हम सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं धार्मिक रूप से परिवर्तन देखते हैं । स्वतंत्रता पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में काफी बदलाव आये हैं । "स्वातंत्र्योत्तर युगीन सामाजिक पृष्ठभूमि में, जनजीवन में तथा सामाजिकता में आर्थिक, राजनीतिक तथा वैज्ञानिक प्रगति ने समाज को पूर्ण रूपेण प्रभावित किया है ।"88

स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में अनेक समस्याओं से छुटकारा मिला किन्तु एक समस्या ऐसी थी जो जनमानस के दिलों में घर कर गयी थी वह थी साम्प्रदायिकता की भावना । धर्म-सम्प्रदाय जैसी संकीर्ण भावनाओं ने अपनी जगह बना ली थी । धर्म एवं साम्प्रदायिकता के आधार पर दंगे-फसाद जैसी भयंकर समस्या सामने थी । "समाज दुर्दांत युग की परिसमाप्ति का संतोष पाकर भी भविष्य में उसकी पुनरावत्ति से आशंकित था । धर्म सम्प्रदायवादी विभीषिकाओं का लौहदंड झेल रहा था । आस्थाएं प्रताडित हो रहीं थीं । मूल्य डगमगा रहे थे । साम्प्रदायिक संकीर्णताओं ने सामान्य जन के मन में भय उत्पन्न कर दिया था ।"89

साम्प्रदायिकता जैसी संकीर्ण भावना लोगों के दिलों में घर कर गयी थी । मन्दिर-मस्जिद को लेकर झगडे-फसाद होने लगे । और इस भावना ने इतना उत्कृष्ट रूप धारण कर लिया कि इस पर नियंत्रण करना मुश्किल हो गया था । हिन्दू-मुस्लिम परस्पर भेद-भाव इतना बढ गया था कि एक-दूसरे को देखना भी पसन्द नहीं करते थे । साम्प्रदायिकता की आग पूरे देश में फैल चुकी थी और इसको चिंगारी दे रहे थे राजनीति की आड़ में बैठे नेता । हिन्दू-मुस्लिम भेद-भाव को भयंकर रूप देने का कार्य इन नेताओं ने किया । दोनों को एक-दूसरे के विरुद्ध भडकाया तथा इस साम्प्रदायिक तनाव से जनता को आतंकित किया ।

एक समय था जब मुगल शासक हमायुँ, शाहजहाँ, अकबर जैसे शासकों ने हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध को मजबूत करने के प्रयत्न किये और सफल भी रहे । उस समय इन शासकों ने धर्म के नाम पर पनप रहे भेद-भाव को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । इस सम्बन्ध में डॉ० जायसवाल जी अपने ग्रन्थ "राही मासूम रजा के उपन्यासों मे समकालीन सन्दर्भ" में लिखती हैं - "भारत के साम्प्रदायिक वातावरण को हिन्दू और मुसलमान दोनों ने बुद्धिजीवी एवं अति महत्वकांक्षी नेताओं ने हवा दी, अपना योगदान दिया, इस अग्निकड में अग्नि प्रज्जवलित करने में अंग्रेजों की कूटनीति पूर्ण चालों ने सहयोग दिया, उनकी फूट डालो, शासन करो, तोडो-फोडो नीति ने इस अग्नि को भडकाया । भारतीय मुगल शासक अकबर, हुमायुँ, शाहजहाँ आदि की धार्मिक सहिष्णुता एवं प्रेम को भूलकर औरंगजेब गजनी के अत्याचारों को अंग्रेज बार-बार स्मरण कराकर भारत देश को साम्प्रदायिकता के गहन खंदक में ढकेल दिया ।"90

धार्मिक भेद-भाव के बीज राजनीतिक नेताओं ने बोये इसके फल अंग्रेजों ने खाये और भुगतान भरा आम जनता ने । इन नेताओं ने साम्प्रदायिकता की जडें इतनी मजबूत कर दीं कि इसे उखाड फेंकना दुर्लभ हो गया जिससे सारा वातावरण दूषित तथा आतंकित हो गया । इस वातावरण का लाभ उठाकर अंग्रेजों ने हिन्दू-मुस्लिम दोनों को बहकाया तथा मुसलमानों को अपना एक पृथक राष्ट्र मांग करने के लिये प्रोत्साहित किया । "सन 1946 चुनाव मे मुस्लिम लीग की सफलता ने उसके पाकिस्तान के ध्येय को आधार बनाकर देश में साम्प्रदायिकता का ताण्डव नृत्य मचाया कांग्रेस ने उन्हें रोकने का प्रयत्न किया, गाँधी जी ने कडा विरोध किया लेकिन साम्प्रदायिकता के उग्रतम के उग्रतम रूप को देखते हुए उन्हें भारत का विभाजन स्वीकार करना पडा ।"91

आज स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज का रूप कुछ और ही है किन्तु फिर भी हम यह नहीं कह सकते कि साम्प्रदायिकता की भावना जड से समाप्त हो गयी है आज भी धर्म को आधार बना कर ढोंगी, कठमुल्ला, पंडित तथा पीला वस्त्र धारण करने वाले ये लोग भोली-भाली जनता में एक-दूसरे के प्रति घृणा की भावना उत्पन्न कर रहे हैं । हिन्दू-मुस्लिम भाई चारे की भावना को नष्ट कर रहे हैं । देश म शान्ति बनाये रखने के स्थान पर उसे भंग

करने का प्रयत्न कर रहे हैं । इसके अतिरिक्त कटटर मुस्लिम तथा कटटर हिन्दू हमारे देश की जनता में पारस्परिक द्वेष और विद्रोह की भावना उत्पन्न कर कलह को बढावा दे रहे हैं ।

साम्प्रदायिकता की भावना आतंकवाद को जन्म देती है यह आतंकवाद शनैः शनैः भारतीय समाज को खोखला कर रहा है । आतंकवाद एक खतरनाक विष है जो किसी को भी निगलने से नहीं चूकता । हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदाय के नाम पर नृशंस हत्याएं होती रहीं और मजा लेते रहे पडोसी देश । अपने नापाक इरादों को अन्जाम देने में कोई कसर नहीं छोडो । हिंसा तथा घृणा की आग मनुष्य को जानवर बना देती है । "आतंकवादी प्रवृत्तियों को बढावा देने में सीमावर्ती पडोसी देशों का भी हाथ रहा ह ताकि भारत की एकता और अखण्डता नष्ट हो जाय और देश टुकडे-टुकड में बँट जाये । आतंकवाद को भडकाने में ये पडोसी देश दिया सलाई का काम कर रहे हैं ।"92

निष्कर्ष :-

अंत में कहा जा सकता है कि स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में अनेक रूप से परिवर्तन हुए हैं । नारी शिक्षा, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा आदि में अनेक सुधार हुए हैं और जिन महात्माओं ने इस क्षेत्र में कदम बढाये उनको सदा-सदा के लिये याद किया जायेगा ऐसे महात्माओं को कोटि-कोटि प्रणाम । स्वतंत्रता के पश्चात एक बहुत बडा परिवर्तन हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध में आया इसके अतिरिक्त जातिवाद की भावना भी काफी हद तक समाप्त हुई है । भारत विविध धर्मों वाला देश है जहाँ अनेक धर्मों के लोग एक साथ मिलकर रहते हैं । किन्तु आज भी समाज के कुछ लोगों को जगाने की आवश्यकता है जो राजनीति की आड़ में षडयंत्र रच रहे हैं और इन लोगों की करतूतों का परिणाम सभी को भुगतना पडता है । यही लोग धर्म एवं सम्प्रदाय के नाम पर परस्पर घृणा पैदा करते हैं । आवश्यकता है सभी जाति धर्म के लोगों को एक साथ रह कर इन भ्रष्टाचारी और षडयंत्र रचने वालों को जवाब देने की ।

******

संदर्भिका

1. समाज दर्शन के मूल तत्व, डॉ० रामजी सिंह पृ० 110
2. विष्णु प्रभाकर के नाट्य साहित्य में सामाजिक चेतना, डॉ० बी० एस० विवेकानन्द पिल्लै पृ० 17
3. समाज दर्शन के मूल तत्व, डॉ० रामजी सिंह पृ० 129
4. विष्णु प्रभाकर के नाट्य साहित्य में सामाजिक चेतना, डॉ० बी० एस० पिल्लै पृ० 17
5. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 64
6. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 63
7. विष्णु प्रभाकर के नाट्य साहित्य में सामाजिक चेतना, डॉ० बी० एस० पिल्लै पृ० 16
8. मध्य युगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, डॉ० कन्हैयालाल श्री वास्तव, डॉ० शारखण्डे चौबे पृ० 01
9. आठवें दशक के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन, डॉ० शोभा कुलकर्णी पृ० 171
10. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 27
11. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 28
12. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 74
13. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 80
14. भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास, डॉ० पी० एस० थॉमस पृ० 37
15. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 80
16. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 81
17. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 115
18. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 87
19. भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास, डॉ० पी० एस० थॉमस पृ० 38
20. भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास, डॉ० पी० एस० थॉमस पृ० 40

21. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 86
22. शिवानी के उपन्यासों में प्रतिबिंबित समाज, डॉ० सिद्राम कृष्णा खोत पृ० 07
23. कमलेश्वर के कथा-साहित्य में वर्ग संघर्ष, डॉ० विमलेश शर्मा पृ० 07
24. कमलेश्वर के कथा-साहित्य में वर्ग संघर्ष, डॉ० विमलेश शर्मा पृ० 16
25. कमलेवर के कथा-साहित्य में वर्ग संघर्ष, डॉ० विमलेश शर्मा पृ० 16
26. धर्मवीर भारती : युग चेतना और अभिव्यक्ति, डॉ० सरिता शुक्ला 28
27. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 116
28. भगवती चरण वर्मा के उपन्यास और युग-चेतना, डॉ० जवाहर लाल सिंह पृ० 117
29. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 82
30. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 66
31. आँचलिक उपन्यासों में वर्ण एवं वर्ग संघर्ष, डॉ० अशोक धुलधुले-प्रथम संस्करण 2011, पृ० 75
32. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 121
33. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 67
34. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 125
35. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद वही पृष्ठ
36. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 117
37. दलित साहित्य अनुसंधान के आयाम, डॉ० भरत सगरे पृ० 08
38. अम्बेडकरवादी सौन्दर्यशास्त्र और दलित, आदिवासी-जनजातीय विमर्श, डॉ० कुमार पाठक पृ० 48
39. अम्बेडकरवादी सौन्दर्यशास्त्र और दलित, आदिवासी-जनजातीय विमर्श, डॉ० कुमार पाठक पृ० 13
40. दलित-चेतना और हिन्दी उपन्यास, डॉ० एन० एस० परमार पृ० 34
41. दलित-चेतना और हिन्दी उपन्यास, डॉ० एन० एस० परमार पृ० 75
42. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 69
43. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी वही पृष्ठ
44. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, डा० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृष्ठ
45. दलित-चेतना और हिन्दी उपन्यास, डॉ० एन० एस० परमार पृ० 76
46. दलित-चेतना और हिन्दी उपन्यास, डॉ० एन० एस० परमार पृ० 52

47. भील जनजाति और संस्कृति, डॉ० अशोक डी० पाटिल पृ० 01
48. आदिवासी एवं उपेक्षित जन, डॉ० भीमराव पिंगल पृ० 69
49. भील जनजाति और संस्कृति, डॉ० अशोक डी० पाटिल पृ० 12
50. भील जनजाति और संस्कृति, डॉ० अशोक डी० पाटिल पृ० 20
51. भील जनजाति और संस्कृति, डॉ० अशोक डी० पाटिल वही पृ०
52. भारत की जनजातियाँ, डॉ० शिवतोष दास पृ० 75
53. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों मे समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 176
54. साठोत्तरी साहित्य में राजनीतिक चेतना, डॉ० बालकृष्ण यल्लप्पा पृ० 14
55. राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समकालीन सन्दर्भ, डॉ० शैलजा जायसवाल पृ० 121
56. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 19
57. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सयद पृ० 20
58. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद वही पृ०
59. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तक, धर्मजैन, कैलाशचन्द दरोगा पृ० 128
60. समय के साक्षी प्रमुख मुस्लिम उपन्यासकार, डॉ० तसनीम पटेल पृ० 27
61. स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में युग-बोध, डॉ० लाल साहब पृ० 43
62. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 71
63. समाज शास्त्र एक परिचय, प्रो० सत्यपाल राहेल पृ० 121
64. समाज ना विद्यमान धर्मो (गुजराती) डॉ० जयेन्द्र कुमार आनन्द जी याज्ञिक पृ० 15
65. समाज ना विद्यमान धर्मो (गुजराती) डॉ० जयेन्द्र कुमार आनन्द जी याज्ञिक पृ० 01
66. समाज ना विद्यमान धर्मो (गुजराती) डा० जयेन्द्र कुमार आनन्द जी याज्ञिक पृ० 03
67. भारतीय संस्कृति, कुसुम वाजपेयी पृ० 184
68. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर पृ० 237
69. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर पृ० 241
70. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर पृ० 242
71. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर पृ० 338
72. मेरा भारत महान, खुशवंत सिंह पृ० 86
73. धर्म एक स्वरूप अनेक, प्रो०, डॉ० तांतेड़ विद्यासागर सिंह पृ० 102
74. भारतीय धर्म और संस्कृति, डॉ० शशि तिवारी पृ० 53
75. संस्कृति का अर्थ और आधुनिक संदर्भ में संस्कृति की उपयोगिता, डॉ० के० आर० श्यामला पृ० 01
76. हिन्दी के आँचलिक उपन्यास सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ, विमल शंकर नागर पृ० 06

77. प्रभाकर माचवे के उपन्यासों में समसामयिक दृष्टि, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 201
78. सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फुले, डॉ० ममता गंगवार, अजय प्रताप सिंह पृ० 23
79. धर्मवीर भारती : युग चेतना और अभिव्यक्ति, डॉ० सरिता शुक्ला पृ० 26
80. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 95
81. सुलभ इंडिया द्वि-मासिक पत्रिका, 12 अगस्त 2012, प्रधान सम्पादक डॉ० बिन्देश्वर पाठक, संपादक-एस० पी० एन० सिन्हा पृ० 02
82. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 82
83. उपन्यासकार इलाचन्द्र जोशी, डॉ० आर० एस० हरिकुमार पृ० 97
84. प्रसाद साहित्य में युग चेतना, डॉ० श्री मती लीलावती देवी गुप्ता, प्रथम संस्करण 1996 पृ० 74
85. प्रसाद साहित्य में युग चेतना, डॉ० श्री मती लीलावती देवी गुप्ता, प्रथम संस्करण 1996 वही पृष्ठ
86. प्रसाद साहित्य में युग चेतना, डॉ० श्री मती लीलावती देवी गुप्ता, प्रथम संस्करण 1996 पृ० 75
87. सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फुले, डॉ० ममता गंगवार, अजय प्रताप सिंह पृ० 62
88. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 87
89. भारत : कल और आज, डॉ० मंज़ूर सैयद पृ० 88
90. राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समकालीन संदर्भ, डॉ० शैलजा जायसवाल पृ० 137
91. राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समकालीन संदर्भ, डॉ० शैलजा जायसवाल पृ० 139
92. धर्मवीर भारती और युग चेतना, डॉ० सरिता शुक्ला पृ० 51

******